Reg. No. 124726035RC0001 ISSN : 2562-6086

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

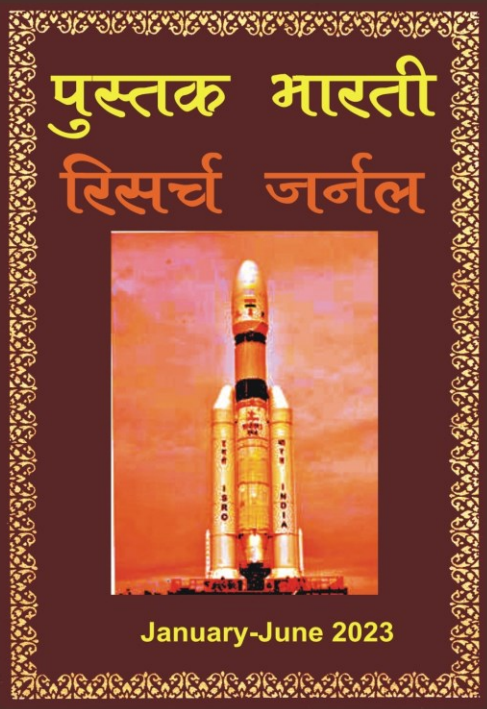

January-June 2023

Pustak Bharati, Toronto, Canada

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

PUSTAK BHARATI RESEARCH JOURNAL

A Peer Reviewed Journal

त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-5, जनवरी–जून, 2023, अंक 1-2

प्रधान संपादक : डॉ. रत्नाकर नराले

सह संपादक : डॉ. राकेश कुमार दूबे

रिव्यू कमेटी

डॉ. प्रो. तंकमणि अम्मा, तिरुवनन्तपुरम्

प्रो. हेमराज सुंदर, मारीशस

डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय, मुंबई

प्रो. डॉ. शांति नायर, केरल

डॉ. सिराजुद्दिन नुर्मतोव, उजबेकिस्तान

प्रो. दक्ष्य मिस्त्री, बड़ोदा

प्रो. कृष्ण कुमार मिश्र, मुंबई

संपादक मण्डल

प्रो. सोमा बंद्योपाध्याय, पश्चिम बंगाल

प्रो. अरुणा सिन्हा, वाराणसी

प्रो. विनोद कुमार मिश्र, त्रिपुरा

प्रो. उमापति दीक्षित, आगरा

प्रो. उपुल रंजीथ हेवावितानागामगे, श्रीलंका

डॉ. मैरम्बी नुरोवा, ताजिकिस्तान

प्रो. दर्शन पाण्डेय, दिल्ली

परामर्ष मण्डल

डॉ. तुलसीराम शर्मा, कनाडा

डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली

डॉ. एन. के. चतुर्वेदी, जोधपुर

प्रो. नीलू गुप्ता, अमेरिका

डॉ. मृदुल कीर्ति, आस्ट्रेलिया

प्रो. कमलेश शर्मा, कोटा

संरक्षक मण्डल

डॉ. यशवंत पाठक, अमेरिका

श्री रतन पवन, अमेरिका

श्री पंकज पटेल, अमेरिका

पत्रिका का मूल्य / सदस्यता राशि संस्था के सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, मंगारी के खाता संख्या 5144696109 (IFSC: CBIN0281306) में जमाकर उसकी सूचना मेल या नं. +91-7355682455 पर दें।

अनुक्रमणिका

संपादकीय

1. अर्वाचीन संस्कृत–साहित्यकारों की वैश्विक दृष्टि 1
   डॉ. हुकम सिंह
2. Ramayana : The Legacy of Good Governance and Sustainable Peace 8
   Roshan Boodnah
3. अपराध का पुनर्निर्माण - एक समीक्षा 18
   डॉ. प्रग्नेश परमार
4. स्वस्थ समाज की परिकल्पना का उपन्यास : कुबेर 27
   श्यामसुंदर पाण्डेय
5. भारतीय ज्ञान परम्परा की धरोहर : गुरु जांभोजी की सबदवाणी में पर्यावरण- चिंतन 33
   डॉ. मिलन बिश्नोई
6. बीकानेर राज्य (1500ई. से 1800 ई.) की कृषि भूमि का विभाजन व उसका स्वामित्वः एक ऐतिहासिक विश्लेषण 39
   डॉ. मनोज कुमार सिनसिनवार
7. उज़्बेक कवि आगाहीय 43
   प्रो. उल्फ़त मुहीबोवा
8. अस्मिता के स्वर 50
   डॉ. राखी बालगोपाल
9. नरेंद्र कोहली के रामकथा उपन्यासों में समकालीन संदर्भ 55
   प्रेम कुमारी
10. शहीद भगतसिंह के विचारों की प्रासंगिकता 66
    दत्तात्रय आसाराम किटाळे

संपादकीय कार्यालय

Toronto, Ontario, Canada, M2R 3E4

email : pustak.bharati.canada@gmail.com

Web : pustak-bharati-canada.com

प्रबंध एवं वितरण

Pustak Bharati (Books-India)Publishers & Distributors

H.No. 168, Nehiyan,Varanasi-221202, U. P. India

email: pustak.bharati.india@gmail.com

* प्रत्येक शोध-पत्र में व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं। संपादक मंडल का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अभिनंदन

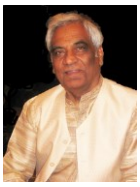

रत्नाकर नराले

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन 'इसरो' की ऐतिहासिक यात्रा साइकिल और बैलगाड़ी पर लड़खड़ाती हुई आगे बढ़ कर आज (अगस्त 20) चाँद पर सॉफ़्ट लैंडिंग की बुलंदी छू गई। यह हम सभी भारतीयों, भारत सरकार और इसरो के वैज्ञानिकों तथा कर्मचारियों के लिए अतीव हार्दिक अभिनंदनास्पद सफलता है। रोवर प्रज्ञान चंद्र भूमि के दक्षिण ध्रुव पर भ्रमण कर के सब विश्व पर गौरव के फूल बरसा रहा है। इसरो की इस कामयाबी ने हम सभी हिंदी भाषियों को इस महान उपलब्धि पर अनगिनत अनंत गीत, काव्य, कथाएँ, लेख-आलेख लिखने के लिए सामग्री और सौभाग्य प्रदान कर दिए हैं।

नासा की तरह विश्व प्रसिद्ध होकर इसरो की साख सातवें आसमान पर चढ़ी है और अब सूर्य मिशन अपने पथ पर अग्रसर है। इस योग्यता से भारत देश प्रगति की ऊंची उड़ान भरता जाएगा यह अब प्रमाणित हो गया है। भारत के दूरदृष्टि, उत्साही और सुयोग्य प्रधान मंत्री से लेकर इसरो के हर एक पुरुष-महिला कर्मचारी तक प्रत्येक व्यक्ति का योगदान इसमें काबिले तारीफ़ है। आओ हम सभी भारत माँ के इन सभी संततियों का जय-जयकार करें।

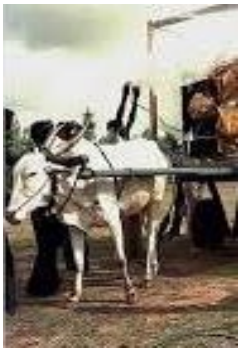

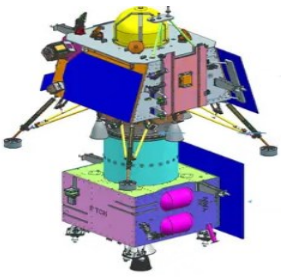

भारत संपूर्ण मानवता का उपकार करना अपना नैतिक दायित्व मानता है। यहीं कारण है कि भारत के प्रधानमंत्री महोदय ने चंद्रयान-3 की सफलता को भारत की सफलता न बताकर संपूर्ण मानवजाति की सफलता बतलायी। परोपकार ही भारतीय संस्कृति का मूल है।

मेरी अत्यधिक अस्वस्थता के कारण 'पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल' का यह अंक काफी विलम्ब के साथ सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ, वह भी संयुक्तांक के रूप में। आशा है पाठकवृन्द इसे सहजता से स्वीकार करेंगे।

... संपादक

1 अर्वाचीन संस्कृत–साहित्यकारों की वैश्विक दृष्टि

डॉ. हुकम सिंह

कविता हृदयस्य कापि भाषा मुखरा मौनमयी वधूर्नवैव। न हि शक्तिरथो न तत्र भक्तिः प्रतिप्रत्तिस्तु समर्पणाय मार्गः।।

कविता हृदयस्य वाक्यषेषः कथिते ऽनुक्ततया प्रकाशमानः। कविता कविता कथा पुराणी न पुराणी न नवा, सुरांगना सा।।[1]

संस्कृत साहित्य के विषय में जैसा कि सबको विदित है कि यह संसार का सर्वप्राचीन साहित्य है, यह आरोप प्रायः संस्कृतेतर भाषीय आलोचकों द्वारा लगाया जाता रहा है कि संस्कृत साहित्य में एक प्रकार की संकीर्णता विद्यमान है फिर चाहे यह संकीर्णता देश की हो, काल की हो या फिर वर्णित विषयों से संबधित।

किन्तु अर्वाचीन संस्कृत साहित्य को देखे तो हमें अनुभव हो जाता है कि स्थिति ऐसी नहीं है। आज का संस्कृत साहित्यकार तमाम संकीर्णताओं से ऊपर उठकर **'यत्र विश्वभवत्येकनीडं प्रभो'** की उक्ति को चरितार्थ कर रहा है। काव्य रचना के प्रत्येक स्तर पर संस्कृत कवि अपनी उपस्थिति दर्ज करवा रहा है। अर्वाचीन संस्कृत साहित्य को यदि मात्रा की दृष्टि से परखा जाये तो यह सिद्ध हो जाता है कि गत दो शताब्दियों में जितनी प्रभूत मात्रा में संस्कृत में सृजन–कर्म हुआ है सम्भवतः उतना कभी नहीं हुआ। यही कारण है कि 'अभिराज' राजेन्द्र मिश्र ने इस युग को 'स्वर्णकाल' कहा है। अर्वाचीन संस्कृत साहित्यकार ने न केवल अपनी रचनाओं की विषय वस्तु में व्यापक परिवर्तन किया है अपितु अन्य भाषीय साहित्य से प्रभावित होकर नवीन विधाओं को भी आत्मसात् कर रहा है। हम कह सकते हैं कि आज संस्कृत साहित्यकार नवीन तेवर के साथ सहृदय–पाठकों को रसासिक्त कर रहा है।

यहॉ अर्वाचीन संस्कृत साहित्यकारों की उन कतिपय विषेषताओं पर विचार करेंगे जिनसे इस साहित्यकारों की वैष्विक दृष्टि प्रमाणित हो जाती है।

विषय–वस्तु :

प्राचीन साहित्य में प्रायः कवि अपनी रचनाओं का विषय या तो पौराणिक चरित्र के आधार पर निष्चित करते थे या फिर उसमें कोरी कल्पना होती थी, किन्तु अर्वाचीन संस्कृत कवि की रचनाओं की विषय–वस्तु में इधर व्यापक परिवर्तन हुआ है। संस्कृत–कवि सीमित देश व काल के बाहर की घटनाओं व चरित्रों के आधार पर भी रचनाएं लिख रहा है। इससे उसकी वैश्विक दृष्टि भी प्रकट हो जाती है। यहॉ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि विश्व के विभिन्न भागों में घटित घटनाओं का वर्णन करने हेतु उनको प्रत्यक्ष देखना अनिवार्य नही है क्योंकि आज के वैज्ञानिक युग में संचार के विभिन्न माध्यमों से कवि अनेक प्रकार की सूचनाएं प्राप्त कर सकता है तथा उनके आधार पर काव्य भी रच सकता है। वस्तुतः प्रतिभाशाली कवि के लिये कुछ भी दुष्कर नही है काव्यमीमांसकार राजशेखर भी कहते है–

"अप्रतिभस्य पदार्थसार्थः परोक्ष इव, प्रतिभावतः पुनरपश्यतोऽपि प्रत्यक्ष इव। केचन महाकवयोऽपि देशद्वीपान्तरकथापुरूषादिदर्शनेन तत्रत्यां व्यवहृतिं निबध्नन्ति स्म।"[2]

राजस्थान निवासी पं. मोहनलाल शर्मा पाण्डेय साहित्य के फलक पर ऐसे ही हस्ताक्षर है जो रूढियों को त्यागकर नवीनता के पक्षधर बने हैं। आपकी कृति "पत्रदूतम्" यूं तो विधा की दृष्टि से दूतकाव्य परम्परा का अनुसरण करती है, किन्तु इसका विषय सर्वथा नवीन है। बीसवीं सदी के उतरार्द्ध में खाडीयुद्व ऐसी घटना थी, जिसने सम्पूर्ण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। इस युद्व में एक तरफ थे

ईराक के राष्ट्राध्यक्ष सद्दाम हुसैन और दूसरी तरफ थी विश्व की तथाकथित महाशक्तियॉ। 1990 में हुए इस युद्व ने विश्व के सामान्य जन मानस पर व्यापक प्रभाव डाला था। यही कारण है कि कवि पाण्डेय ने भी विदेशी धरती पर हुए इस युद्व से विचलित होकर "पत्रदूतम्" खण्डकाव्य की रचना की। इसमें कवि ने युद्व के दौरान अमेरिका के एक वायुसेनाधिकारी द्वारा अपनी पत्नी को लिखे गये पत्र के व्याज से युद्ध की विभिषिकाओं का मार्मिक वर्णन किया है। सद्दाम के बर्बर सैनिकों द्वारा कुवैत में किये नरसंहार के मार्मिक चित्रण का उदाहरण दृष्टव्य है–

अत्याचारा असंख्या बहुविधभयदा धोरबाधाः कृतास्तै–
र्नासा ग्रीवाश्च भिन्ना युवनरवृषणाः
स्फोटितास्तीक्ष्णषस्त्रैः।
सद्यो जाता हि डिम्भा गदहरणपदे मारिता अंगभंग
स्त्रीणां भग्नं सतीत्व युवजनरूधिरं प्रोद्धृतं
नालयन्त्रैः।।[3]

रामशीष पाण्डेय (रांची) ने भी दूतकाव्य के माध्यम से अपनी वैश्विक दृष्टि का परिचय प्रस्तुत किया है। आपकी **'मयूखदूतम्'** नाम रचना में नायक पौर्वात्य है तो नायिका पाश्चात्य। इसमें नायक मयूख को दूत बनाकर उसे भारत के पटना नगर से इंग्लैड भेजता है। यह मयूखदूत पटना से काशी, आगरा, दिल्ली होते हुये कराची, मक्केश्वर, यूनान, रोम व पेरिस के रास्ते इंग्लैड जाता है। कवि ने इन स्थानों के भौगोलिक व प्राकृतिक दृश्यों का रसास्वादन पाठक को मन्दाक्रान्ता छनद के माध्यम से करवाया है। प्रो0 रामकरण शर्मा ने **"तैलावलिः प्लवमाना"** कविता में खाडी युद्ध के दौरान समुद्र में फैले तैल के माध्यम से आज की बीभत्स राजनीति और मृतप्राय मानवता का मार्मिक बोध इस प्रकार करवाया है–

नाहमस्मि जलदो जलधिर्वा
मानसं नहि सरोऽस्मि सरिद्वा
दानवव्यथितधातुमलाया
मातुरस्मि वमनावलिरूर्व्याः।।
अद्य को ऽत्र सुलभः स महेशो
य पिबेन्मम विषायतिमुग्राम्।
सर्वतोऽमृतवचांसि मुखाग्रे
बीजवन्ति च विषाणि कराग्रे।।[4]

यहॉ कवि सत्यव्रत शास्त्री का महाकाव्य **"श्री रामकीर्ति महाकाव्य"** विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसकी विशेषता यह है कि इसकी कथा का आधार भारत देश में प्रचलित कोई रामकथा न होकर थाईलैण्ड की रामकथा है। कवि ने थाई देश में प्रचलित रामकीर्ति नाम रामगाथा को इसका उपजीव्य बनाया है। इस महाकाव्य में ऐसे अनेक प्रसंग हैं जो भारतीय रामकथाओं में उपलब्ध नहीं होते, यथा विभीषण की पुत्री वेन्जकीय से हनुमान् का रमण व उससे असुरफद नाम पुत्र की उत्पति। यह कथा सुखांन्तक है क्योंकि इसमें राम व सीता का मिलन हो जाता है। यह हर्ष का विषय है कि संस्कृत–पाठक अब भारत के बाहर की रामकथा का भी रसास्वादन कर सकता है।

वैश्वीकरण के इस युग में पश्चिम के प्रभाव से संस्कृत कविता अस्तित्ववादी दर्षन व अतियथार्थवाद से भी सम्बद्ध हुई है। इस दृष्टि से केशवचन्द्र दास एवं हर्षदेव माधव की रचनाएं पठनीय है। कवि दास स्वयं को आषाढ की बूंद बतलाते है जो भूतल से मिलकर उसी में लीन हो जाना चाहती है–

नाहं निक्षिप्त कन्दुकः
प्रत्यागमिष्यामि
भूतलं संस्पृश्य परमेको मिमिलिषुः
आषाढस्य बिन्दुः[5]

कवि माधव अपनी कविता में आधुनिक प्रौद्योगिकी व यूरोप के जीवन या समाज से सन्दर्भ लेकर भी कवितायें रचते हैं। यथा–

अकलनन्दे! कुत्र त्वमसि?
मम रेडियोतरंगदीर्घतायाः
प्रत्युत्तरो नास्ति
प्रेम्णो गणकयन्त्रे
किं ते मनोऽस्ति
एण्टी मैटर (अवस्तु) निर्मितम्?[6]

वैज्ञानिक युग से प्रभावित होकर भी संस्कृत में काव्य रचे जा रहे हैं। 1966 में संगमनी

पत्रिका (प्रयाग) में प्रकाशित **"एकविंशति शताब्दी–द्वाविंशति शताब्दी"** ऐसा ही रूपक है, जिसमें भविष्य की नाना प्रकार की कल्पनाएं की गई हैं, यथा–2060 में मनुष्य शुक्रग्रह पर विचरण करेगा, मनुष्य की परमायु 30 वर्ष होगी। यह रूपक हिंदी मूल का है, जिसके लेखक भगवान दास फड़िया हैं तथा इसका संस्कृतानुवाद प्रेमशंकर शास्त्री ने किया है। इस रूपक में स्थिति उस समय हास्यास्पद बन जाती है, जब एक पुरूष पात्र को ज्ञात होता है कि जिस सहयात्रिणी से वह प्रेम करने लगा था, वह तो प्लास्टिक की एक रॉबट मात्र है, स्त्री नहीं।

शस्त्रीकरण की प्रतिस्पर्धा में रत विश्व के राजनेता जब निःशस्त्रीकरण सम्मेलन का आयोजन करते हैं तो महाराजदीन पाण्डेय जैसे साहसी कवि इसे फूंस की झोपडी में बच्चों द्वारा आग उलीचने का खेल जैसा ही मानते हैं। आप इस नवीन सभ्यता को भस्मासुर के समान ही स्वीकारते हैं–

षस्त्रीनिर्माणे प्रतिस्पर्धा
निस्त्रीकरणसम्मेला
तृणकुटीके शिशूनामग्न्युपवनखेला
सभ्यता भस्मासुरीयति
मानयति मृत्यूत्सवम्
शिरसि कृत्वाण्वस्त्रपोट्टलिकाम्
स्खलन्ती रता नृत्ये
वदन्ती–
अयि मां लोकय![7]

विभिन्न कार्यवश जब अर्वाचीन संस्कृत–कवि विदेशों का भ्रमण करके आता है तो वहां के प्राकृतिक दृश्यों, सभ्यता, संस्कृति आदि से प्रभावित होकर उन्हें अपने काव्य में उकेरने के लोभ का संवरण नहीं कर पाता। टी.व्ही. परमेश्वर अय्यर (केरल) ने **"स्विसदेश प्रकृति–वर्णनम्" तथा "जर्मनीयात्रावर्णनम्"** दो वैदेशिक यात्रावृत्तपरक काव्य रचे है।

कविवर सत्यव्रत शास्त्री ने 1975 मे की गई जर्मनी यात्रा तथा 1977 में की गई थाईलैण्ड की यात्रा को क्रमशः **शर्मण्य देशः सुतरां विभाति'** तथा "थाई देशविलासम्", 'बालीप्रत्यभिज्ञान –शतकम्'' तथा 'यवसाहित्यशतकम्' इन तीन लघु काव्यों की रचना करके बाली द्वीप के आंतरिक एवं बाह्य सौन्दर्य का वर्णन किया है। कवि प्रभाकर नारायण कवेठकर ने पेरिस के संग्रहालय में सज्जित विश्व विख्यात कलाकृति मोनालिसा का सौन्दर्य पान करके मोनालिसां तां मानसा स्मरामि नामक भाव पूर्ण कविता लिखी है, जिसका प्रकाशन दूर्वा (अंक 23) पत्रिका में हुआ है।

इधर अर्वाचीन संस्कृत कवियों में प्रमुख विदेशी चरित्रों को नायक बनाकर काव्य रचना की प्रवृत्ति भी बढी है। हिन्दी के प्रख्यात कवि नागार्जुन ने अपने रचना काल के आरम्भिक दौर में रूस के क्रांतिकारी महान नेता लेनिन पर श्लेनिनशतकम् नामक काव्य संस्कृत में लिखा था। इसी चरित्र पर आधारित पद्म शास्त्री का 15 सर्गात्मक महाकाव्य "लेनिनामृतम्" विशेष रूप से दर्शनीय है। सम्भवतः किसी विदेशी क्रांतिकारी को आधार बनाकर लिखा गया यह संस्कृत का प्रथम महाकाव्य है। इस महाकाव्य में प्राचीन संस्कृत कवियों की भांति लेनिन को अवतारी पुरूष के रूप में चित्रित न करके एक साधारण मनुष्य के रूप में दिखलाया गया है। पद्म् शास्त्री ने इस महाकाव्य में बोल्शेविक क्रांति के जन्मदाता ब्लादिमीर लेनिन के चरित्र, जीवन, साम्यवादी दर्शन, रूस का भौगोलिक वर्णन एवं अंत में भारत–रूस की मैत्री की चर्चा की है। कवि ने रूस व भारत की मैत्री की बात वोल्गा (रूस की एक नदी) से गंगा के मिलन के रूप में प्रकट की है–

प्रसरतु जनभूत्यै वोल्गया सार्धमेषा।
निजविमलजलाढ्या जाह्नवी जीवलोके।।[8]

कवि रघुनाथ प्रसाद द्विवेदी ने मैक्सिम गोर्की पंचशती काव्य में विश्व के महान सर्वहारा लेखक मैक्सिम गोर्की के व्यक्तित्व व कृतित्व पर प्रकाश डाला है। आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी ने अफ्रीका के स्वाधीनता सैनानी नेल्सन मण्डेला के कारागार से मुक्ति के प्रसंग को आधार बनाकर **"शकटारकाव्यम्"** लिखा है। आपने यूथिका नाटिका भी लिखी है, जो रोमियो–जूलियट की

प्रेम–कथा पर आधारित है।

इनके अतिरिक्त डॉ. बनमाली बिश्वाल ने वेलेण्टाइन डे नामक पाश्चात्य–उत्सव पर आधारित प्रेम काव्य "वेलेण्टाइन डे संदेशः" की रचना कर सिद्ध किया है कि प्रणय की कोई सीमा नहीं होती। अप्पाशास्त्री राशिवडेकर ने **"शाहोः कुमारावाप्तिः"** एवं "उद्वाहमहोत्सवम्" काव्यों के माध्यम से अपने समय के अंग्रेज राजकुमार प्रिंस ऑफ वेल्स की प्रशासनिक एवं वैवाहिक घटनाओं को निबद्ध किया है। लक्ष्मीनारायण द्विवेदी (जयपुर) ने पुरूसिकंदरीयम् काव्य में अलेक्झेण्डर व पोरस से सम्बंधित घटनायें वर्णित की हैं। तिरूमल बुक्कपट्टन ने 'आंग्लजर्मनी युद्ध विवरणम्' नामक महाकाव्य में इंग्लैण्ड व जर्मनी के मध्य हुए युद्ध का वर्णन किया है। जॉर्ज पंचम् के निधन के पचात् उनके ज्येष्ठ पुत्र एडवर्ड अष्टम् द्वारा प्रेम के कारण वंश परम्परा से प्राप्त साम्राज्य को ठुकरा देने की घटना से प्रभावित होकर ए. गोपालाचार्य ने 'युद्धवृद्वसोहार्दम्' नामक काव्य की रचना की। पशुपति झा (नेपाल निवासी) जहां अपने महाकाव्य नेपालसाम्राज्योदय में अपने देश नेपाल का वर्णन करते है, वहीं भारत के सम्बंध में वे अपनी आस्था भी प्रकट करते हैं। राजा श्यामकुमार टैगोर द्वारा जर्मनिकाव्यम् में जर्मनी देश का इतिहास वर्णित करना, अभिराज राजेन्द्र मिश्र द्वारा इण्डोनेशिया की भाषा में संस्कृत साहित्य का इतिहास वर्णित करना, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री द्वारा साहित्यवैभवम् में मोटरकार, रेलयान, जहाज, बिजली, छायाचित्र को विषय बनाना इत्यादि ऐसे अनेक उदाहरण है जो अर्वाचीन संस्कृत कवि को वैश्विक स्तर पर नई पहचान दिला रहे है।

विधाएँ :

जब से संस्कृत कवि का संस्कृतेतर भाषीय साहित्य से परिचय हुआ है, फिर चाहे वह साहित्य पौर्वात्य हो या पाश्चात्य, तब से अपने कथ्य को प्रस्तुत करने के लिये वह नवीन विधाओं रूपी कविता–कलेवर को भी अपनाने में हिचक नहीं रहा। गद्य साहित्य के अन्तर्गत लघुकथा व अतिलघुकथा (शार्ट–शॉर्ट स्टोरी) जासूसीकथा (डिटेक्टिव स्टोरी), उपन्यास, ललित निबन्ध, यात्रावृत, पत्रकारिता, विनोद–कणिकायें (चुटुकले) आदि विधाओं में सृजन–कर्म हो रहा है।

गद्य–साहित्य की इन विधाओं में ललित निबन्ध उल्लेखनीय है साथ ही उल्लेखनीय है इस विधा के प्रमुख रचनाकार यथा–हृषीकेश भट्टाचार्य, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, गणेशराम शर्मा, देवर्षि कलानाथ शास्त्री आदि। देवर्षि कलानाथ शास्त्री संस्कृत साहित्य में ललित निबन्ध के उद्भव व विकास के विषय में अपने विचार कुछ यू प्रकट करते हैं–"व्यक्तिव्यंजक या ललित निबन्ध का उद्भव यूरोप में, विशेषकर फ्रांस में हुआ। यदि ललित निबन्धों के उदाहरण प्राचीन साहित्य में खोजे तो उन्हें भी अलंकृत शैली में लिखे गये स्तुतिपरक दण्डकों तक भी ले जाया जा सकता है, किन्तु वैसा साहित्य सही अर्थो में पाश्चात्य–साहित्य के सम्पर्क का परिणाम है, यह मानने में संकोच करना उपयुक्त प्रतीत नहीं होता।"[10]

पद्य–साहित्य में भी कई नवीन विधाओं ने प्रवेश किया है। एक ओर जहां अभिराज राजेन्द्र मिश्र जैसे कवि कजरी, नकटा, सौहर आदि लोकगीतों से प्रभावित होकर संस्कृतगीत रच रहे हैं, वहीं उर्दू फारसी की गजलशैली पर आधारित गीतधारा एवं भावधारा भी सतत् प्रवाहमान है। कमलेश मिश्र (बिहार) ने कमलेशविलासः में तथा भटट् मथुरानाथशास्त्री ने अपने विविध काव्यों में कव्वाली, ठुमरी, लावणी के साथ गजलों का भी सुन्दर एवं शास्त्रीय प्रयोग किया है। गीतिवाणी (प्रकाान् 1927) में उर्दूभाषाचत्वर नामक खण्ड में भटट् जी की 58 गजल–गीतियों का संकलन है। आचार्य जगन्नाथ पाठक ने कापिशायनी, मृद्वीका, पिपासा रूपी सुराही से काव्यरसिकों को सुस्वादु चशकपान करवाया है। समीक्षक डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी पण्डित बच्चूलाल अवस्थी की गजल–गीतियों को शिल्प व भाव की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट मानते है। अवस्थी जी की गजल–गीति का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

पिका मौनं भजेरन् मासि वसन्ते कथंकारम्।
शरः शाकुन्तलः सिद्ध्येन्न कथंकारम् ?।।
भ्रुवोर्भगभ्रमाद् भूम्ना निषेधाः सम्प्रतीयेरन।
कपोलप्रान्तसंकेता निगुह्यान्ते कथंकारम् ?।।[11]

'अभिराज' राजेन्द्र मिश्र ने भी कई लोकप्रिय गजलों की रचना की है और अपने आधुनिक काव्यशास्त्र 'अभिराजयशोभूषणम्' में संस्कृत–गजल के लिये 'गलज्जलिका' शब्द गढा है।[12]

"विमानकाव्यविधा" संस्कृत कविता में एक नवीन विधा है, जिसने सभी का ध्यान आकर्षित किया है। जब संस्कृत–कवि ने विमानयात्रा का सुखद अनुभव किया तो स्वतः ही उसकी लेखनी से संस्कृत कविता निःसृत होने लगी। इस अनुभव ने या तो खण्डकाव्य का रूप लिया या फिर वह मुक्तक रचना के रूप में प्रस्तुत हुआ। वेंकटराघवन् की कविता अभ्रमभ्रमभ्रविलायम् तथा प्रभाकरनारायण कवेठकर की भूलोकविलोकनम् मुक्तक रचनायें है।[13]

'अभिराज' राजेन्द्र मिश्र ने **'विमानयात्राशतकम्'** नामक खण्डकाव्य की रचना कर नई दिल्ली से बाली द्वीप की राजधानी डेनसपार तक की अपनी हवाई यात्रा का वर्णन किया है। इस काव्य में विमान की आंतरिक सज्जा तथा विमानगवाक्ष से दिखते प्राकृतिक दृश्यों का मनोहारी वर्णन प्राप्त होता है। अभिराज जी को विमान के नीचे स्थित बादल दूर्वास्थली में तृण चरते मेषशावक से प्रतीत होते हैं–

विमानाधस्तले कीर्णा असंख्या श्वेतवारिदाः।
दूर्वास्थल्यामभासन्त चरन्तो मेषशावकाः।।[14]

किन्तु प्रो. रामकरण शर्मा की व्यथा यह है कि विमान में सैर करते हुये यात्री विमान के भीतर ही सब कुछ कर सकते है, बस गवाक्ष (खिडकी) नहीं खोल सकते–

पिबत खादत मोदत यात्रिणः
पठत जाग्रत माद्यत सीदत।
लिखत पश्यत धूमयतापि च
न तु गवाक्षमपावृणुत स्वयं।।[15]

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी ने भारत से पूर्वी जर्मनी तक की यात्रा के अनुभव **धरित्रीदर्शनलहरी** में उकेरे है, जो पॉच उन्मेषों मे विभक्त है। आपके काव्य में पदे–पदे मेघदूत की छाया दृष्टिगत होती है। डॉ. त्रिपाठी ने व्योमबाला (एयरहोस्टेज) व यानाध्यक्ष (केप्टन) के स्वागतयुक्त वचनों को इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

आरूढश्च प्रमुदितमनाः प्रेर्यमाणो विमानं
स्थानं नीतः क्लमविगमकं व्योमबालाप्रदिष्टम्।
यानाध्यक्षो गमनसमयं चाथ संघोष्य यातृन्
प्रीतः प्रीतिप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार।।[16]

संस्कृत नाट्य साहित्य में भी अनेक नवीन विधाएं विकसित हुई हैं यथा नुक्कड नाटक–स्ट्रीट प्ले (अभिराज राजेन्द्र मिश्र रचित चतुष्पथीयम् तथा डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी रचित प्रेक्षणकसप्तकम्) रेडियो नाटक (डॉ. रमाकान्त शुक्ल रचित नाट्यसप्तकम् तथा देवर्षि कलानाथ शास्त्री रचित नाट्यवल्लरी) संगीतिका या गीतिनाटय–ऑपेरा (वनमाला भवालकर रचित रामवनगमनम् एवं पार्वतीपरमेश्वरीयम्), न्त्यनाटिका–बैले (नलिनी शुक्ला रचित पार्वतीतपश्चर्या व राधानुनयः), एंकाकी नाटक (अभिराज राजेन्द्र मिश्र, लीलाराव आदि नाटककार प्रमुख)।

छन्द :

छन्द की दृष्टि से 20वीं शताब्दी में बहुविध प्रयोग हुये हैं। भट्टमथुरानाथशास्त्री इस दृष्टि से प्रमुख प्रयोगकर्ता कहे जा सकते हैं। आपने ब्रजभाषा के छन्दों में दोहा, सोरठा, कवित्त, सवैया, धनाक्षरी आदि के साथ–साथ उर्दू के काव्य से गजल में प्रयुक्त छन्दों में भी रचनाएं लिखी हैं। इनके पश्चात् अनेक संस्कृत–कवियों ने इनका सफल प्रयोग किया है। श्रीभाष्यम् विजयसारथि ने तेलुगु भाषा के छन्दों में भी संस्कृत कवितायें लिखी हैं।

देशी छन्दों के साथ विदेशी छन्दों का भी प्रयोग संस्कृत में किया जाने लगा है। डॉ. हर्षदेव माधव इस विषय में अग्रणी हैं। आपने दो जापानी छन्दो हाइकू व तांका का सुन्दर प्रयोग अपने कथ्य को प्रस्तुत करने के लिये किया है। हाइकू छन्द की विशेषता यह है कि इसके तीन

पदो के कुल 17 वर्णो में कवि अपना अभिप्राय प्रस्तुत कर देता है–

यथा–रूग्णालयस्य
मक्षिकाः कुशलिन्यः
स्वस्था मशकाः[17]

तांका छन्द पंच पाद युक्त होता है, जिसमें 31 वर्ण होते हैं। कवि माधव दक्षिण कोरिया के साहित्य से ग्रहण किये गये सीजो छन्द में भी कवितायें रच रहे हैं। इस छन्द की तीन पंक्तियों में कुल 45 वर्ण होते हैं।

वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य ने अंग्रेजी कविता के प्रसिद्ध छन्द सानेट का भी प्रयोग किया है। एक सानेट में कुल 14 पंक्तियां होती हैं तथा इनमें एक कविता भी पूर्ण हो जाती है। आपने सानेटों के लिये संस्कृत में **संस्तबक** शब्द प्रयुक्त किया है। आपके सानेटों (संस्तबकों) का उत्तम संग्रह **कलापिका** (कोलकत्ता, 1969) के नाम से प्रकाशित हुआ है।

इधर पिछले कुछ दशकों से प्राचीन छन्दों के बन्ध तोडते हुये मुक्तछन्द में भी कवितायें लिखने की प्रवृत्ति बढी है, किन्तु कहीं–कहीं यह प्रयोग पद्य को गद्य के निकट ले आता है, यदि उसमें काव्य लय विद्यमान नहीं है तो। मुक्तछन्द की दृष्टि से केशवचन्द्र दास उल्लेखनीय हैं। आप प्रायः मुक्तछन्द में ही कवितायें रचते हैं। यथा–

निधिभवनस्य/अलिन्दे यथा/श्रूयते
भौतिकतास्वरः/विक्षिप्तदीनतासु च/चीत्करोति/
शैलकल्पक्षुधा/कमहं श्रावयिष्यामि/प्रसूतिकाव्यथां
मम?[18]

अनुवाद :

अर्वाचीन संस्कृत कवि न केवल मौलिक सृजन में व्यस्त है अपितु वह विदेशी भाषाओं की प्रमुख रचनाओं को संस्कृत में अनूदित भी कर रहा है। इसमें दो तरफा लाभ होता है। एक तो संस्कृत के पाठक को विदेशी भाषाओं के साहित्य का रसास्वादन हो जाता है तथा दूसरा इससे संस्कृत के भाण्डागार में भी श्रीवृद्धि होती है। यथा–राजराज वर्मा ने शेक्सपीयर के ऑथेलो नाटक का गद्य रूपान्तरण किया था। लक्ष्मण शास्त्री तैलंग (काशी) ने शेक्सपीयर के मर्चेंट ऑफ वेनिस तथा हेमलेट के काव्यात्मक सार वेतस्वती सार्थवाहः तथा हेमन्तकुमारः के नाम से किये। श्री शैल दीक्षित ने शेक्सपीयर के कॉमेडी ऑफ एरर्स का गद्यरूप में अनुवाद भ्रान्ति विलासम् के नाम से किया। श्री आर. कृष्णमाचार्य ने शेक्सपीयर के मिडसमर नाइट्स ड्रीम के आधार पर वासन्तिकस्वप्न की रचना की। डॉ. हरिहर वि.त्रिवेदी एवं लक्ष्मीनारायण ओ.जोशी द्वारा अनूदित अंग्रेजी कविताओं का संकलन 'आंग्लरोमांचम्' (चौखम्भा 1974) नाम से प्रकाशित हुआ है। कवि रामानन्दाचार्य ने शेक्सपीयर, ब्राउनिंग आदि की कतिपय प्रमुख कविताओं को लघुकाव्यमाला (मद्रास, 1914) में प्रकाशित करवाया था।

गोविन्दचन्द्र पाण्डेय ने भी 'अस्ताचलीयम्' संग्रह में अंग्रेजी कविताओं का अनुवाद किया है। यहां उल्लेखनीय है कि दूर्वा पत्रिका का एक सम्पूर्ण अंक 'विश्वकवितांक' के नाम से प्रकाशित हुआ था, जिसमें विश्व की विभिन्न भाषाओं के कवियों की कविताओं का संस्कृतानुवाद प्रस्तुत किया गया है।

झालारापाटन (राज.) निवासी गिरिधर शर्मा नवरत्न ने उमर खैयाम की रूबाईयों का संस्कृतानवाद 'उमरसूक्तिसुधाकर' संग्रह में किया था, यह पृथिवी वृत्त में रचित है। अशोक अकलूजकर ने उर्दूकाव्यमधु के नाम से उर्दू कवितओं का अनुवाद किया जो शारदा पत्रिका (1966) में प्रकाशित हुआ। देवर्षि कलानाथ शास्त्री ने भी 'कवितावल्लरी' में कतिपय गजलो का सुन्दर संस्कृतानुवाद किया है। कवि रामशास्त्री में सिन्दबाद की कहानियो को सिन्धुवादवृत्तम् में संस्कृतरूपान्तर करके प्रस्तुत किया। टी.व्ही. परमेश्वर अय्यर (केरल) ने स्विट्जरलेण्ड, जर्मनी, स्वीडन आदि देशों के राष्ट्रगीतों का संस्कृत में पद्यानुवाद किया है, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त होता है।

इस प्रकार अर्वाचीन संस्कृत कवि रचना के प्रत्येक स्तर पर अपनी वैश्विक दृष्टि का परिचय दे रहा है। अब कवि पाण्डित्य प्रदर्शन के

स्थान पर अपने कथ्य को प्रस्तुत करने में ध्यान देने लगा है। इसके लिये वह नवीन विधाओं को आत्मसात् करके बहुविध विषयों को प्रकट कर रहा है। व्याकरण–नियमों में भी शिथिलता आई है। देशी व विदेशी शब्दों का भी संस्कृतिकरण किया जा रहा है। या तो अन्य भाषीय शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण किया जा रहा है या फिर नवीन शब्द आवश्यकतानुसार गढे जा रहे हैं। प्रतीक, बिम्ब, मिथक, फ्लेश बैक आदि का प्रयोग हो रहा है। हम कह सकते है कि अर्वाचीन संस्कृत कवि वैश्विक दृष्टि से अन्य किसी भाषा से बढकर नही है तो कम भी नहीं है। आनन्दवर्धनाचार्य की यह उक्ति इस सन्दर्भ में प्रासंगिक ही है–

वाचस्पतिसहस्त्राणां सहस्त्रैरपि यत्नतः।
निबद्धा सा क्षयं नैति प्रकृतिर्जगतामिव।।[19]

सन्दर्भ सूची :

1. शतपत्र काव्य से उद्धृत (श्लोक क्रमांक–7 व 95), रचयिता–आचार्यरेवाप्रसाद द्विवेदी
2. काव्यमीमांसा (चतुर्थ अध्याय से उद्धृत)
3. पत्रदूतम् (श्लोक क्रमांक–39)
4. दीपिका से उद्धृत (पृष्ठ 151,152), शारदा प्रका0– दिल्ली (1992)
5. ईशा से उद्धृत (पृष्ठ–1)
6. अलकनन्दा से उद्धृत (पृष्ठ–18)
7. मौनवेधम् से उद्धृत (पृष्ठ–34)
8. लेनिनामृतम् (15/74)
9. मद्रास से प्रकाशित (1937)
10. संस्कृत वाड्मय का वृहद् इतिहास (सप्तम खण्ड) से उद्धृत (पृष्ठ–499) प्रका0 उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ (2000)
11. वही (पृष्ठ–299 से उद्धृत)
12. अभिराजयषोभूषणम् (प्रकीर्णतत्वोन्मेष)
13. डॉ. रमाकान्त शुक्ल (वैमानिकम्), डॉ. हरिदत्त शर्मा (चल–चल विमानराज रे) कविताओं का भी उल्लेख मिलता है
14. विमानयात्राषतकम् (श्लोक क्रमांक–52)
15. वीणा से उद्धृत (पृष्ठ–77)
16. धरित्रीदर्षनलहरी (1/6)
17. नखदर्पण से उद्धृत (पृष्ठ–99)
18. ईशा (पृष्ठ–4)
19. ध्वन्यालोक (4/10)

प्राचार्य,
राजर्षि राजकीय स्वायतत्तशाषी महाविद्यालय, अलवर, राजस्थान

2 Ramayana : The Legacy of Good Governance and Sustainable Peace

Roshan Boodnah

Abstract

When it comes to the principles of *good governance* and *sustainable peace*, the epic Ramayana leaves a significant legacy. Lord Rama's story is a timeless guide for leaders and societies seeking to establish harmonious governance and long-term peace.

According to the Ramayana, the *magnum opus* of Valmiki, good governance is founded on integrity, justice, and compassion. Lord Rama, portrayed as an ideal king, upholds righteousness and moral values in his actions, demonstrating the value of *ethical leadership*. His devotion to *dharma* (righteousness) and adherence to the rule of law highlight the importance of open and accountable governance.

The epic also emphasizes the importance of *inclusivity* and well-being in governance. Lord Rama's reign is concerned with the well-being of all his subjects, regardless of their background or social standing. This emphasis on inclusivity fosters social harmony and assists in addressing inequalities, thereby fostering sustainable peace.

Furthermore, the Ramayana emphasizes the value of forgiveness, reconciliation, and conflict resolution. Lord Rama's willingness to forgive Ravana's brother Vibhishana, as well as his efforts to form alliances with diverse communities, demonstrate the power of dialogue and cooperation in achieving peaceful resolutions.

The Ramayana's legacy in terms of good governance and a sustainable peace can be found in its teachings on ethical leadership, inclusivity, justice, forgiveness, participatory governance, and environmental stewardship. By embracing these principles, leaders and societies can work to establish governance systems that prioritize the well-being of all, promote *social cohesion*, and foster long-term peace for future generations.

Keyterms : *Dharma, good governance, sustainable peace, inclusivity, ethical leadership, social cohesion*

Ramayana – The Magnum Opus

The Ramayana is widely regarded as a literary treasure among the ancient Indian literature that have conquered the heart of millions across the globe. It is an epic story with a significant place in Hindu mythology and a profound influence on cultural, religious, and literary traditions throughout the Hindu diaspora.

The Ramayana, written by the sage Valmiki, tells the timeless story of Lord Rama, an incarnation of the Hindu god Vishnu, and his quest to rescue his wife Sita from the demon king Ravana. The epic is divided into seven books, or Kandas, and contains over 24,000 verses. The text is widely regarded as literary treasure that has become popular in many countries of the world. Valmiki wrote this epic poem at first in Sanskrit language around 300 BCE and after that, many vernacular poets have rewritten and translated in different languages.

The Ramayana is a rich tapestry of themes, characters, and moral lessons. It delves into profound ideas like dharma (righteousness), devotion, honour, loyalty, sacrifice and good governance among others. The Ramayana, through its captivating narrative, provides insights into human emotions, dilemmas, and the complexities of life.

The epic Rāmāyaṇa serves as a historical archive of social and moral principles that are

still very much relevant in the Hindu community today. The Rāmāyaṇa tells the story of the heroic warrior-prince Rāmā and his famous 11 deeds. During its prolonged and complex interpretative history, the book has undergone countless interpolations, redactions, vernacular translations, and local retellings. But over the ages, these themes have remained central to Hindu philosophy and tradition; they continue to be a source of inspiration for literature, dance, art, and moral education. In the Hindu religion, Rama is revered as the model of social and moral conduct, setting and upholding societal standards. (Balkaran, 2012)[1]

Key Teachings

Like any monumental work of literature, the Ramayana has always functioned on a variety of levels. Through the millennia of its popularity, it has attracted the interest of many kinds of people from different social, economic, educational, regional, and religious backgrounds. (Vālmīki *et al.*, 1984)[2]

The Ramayana emphasizes the importance of adhering to ***dharma,*** the righteous path. Lord Rama is depicted as the embodiment of dharma, showing the significance of moral values, integrity, and righteousness in one's actions and decisions.

The epic highlights the power of unwavering ***devotion and loyalty***. Sita's devotion to Lord Rama, Hanuman's unwavering dedication, and the loyalty displayed by various characters demonstrate the strength and transformative nature of true devotion.

The Ramayana underscores the value of ***respect and reverence for parents and elders***. Lord Rama's deep respect for his father, Dasharatha, and the veneration shown towards sages and wise beings exemplify the importance of honoring and seeking guidance from elders. The epic explores the **complexities of human relationships** and the virtues of love, trust, and compassion. Lord Rama's unconditional love for Sita, the bond between brothers (Rama, Lakshmana, and Bharata), and the friendships formed along the journey all highlight the significance of nurturing and valuing relationships.

The Ramayana also emphasizes the value of ***self-control and restraint.*** Lord Rama's ability to maintain composure, even in difficult situations, serves as an example of the importance of mastering one's emotions and impulses. The epic teaches the ***power of forgiveness and compassion.*** Lord Rama's forgiveness towards Vibhishana, despite his association with Ravana, and his compassion towards the beings in the forest displays the transformative and healing nature of forgiveness and compassion.[3]

These teachings serve as guiding principles, offering insights into personal conduct, relationships, spirituality, and the pursuit of righteousness. The Ramayana's enduring legacy lies in its ability to impart timeless wisdom that transcends boundaries and resonates with people from diverse backgrounds.

Good Governance in Ramayana

Good governance is essential for promoting social advancement, economic development, and political stability. It ensures that power is used responsibly and in the people's best interests. Good governance promotes the well-being and prosperity of societies and organizations by promoting transparency, accountability, participation, the rule of law, effectiveness, efficiency, and ethical behaviour.

Ayodhya Kanda - Book 2, Chapter 6, Verses 20-25:

Lord Rama speaks to Bharata and outlines the principles of good governance while preparing to leave for the forest:

धर्मेण हि प्रजाः सृष्टाः सत्यं च व्रतमिच्छता ।
तेन सर्वाः प्रजाः सृष्टाः सर्वे च नृपतींस्तव ।। २-६-२०
सत्येन हि प्रजा रक्ष्या धर्मेण प्रियतां मम ।
अयोध्यामनुरक्तास्तु भविष्यन्ति न संशयः ।। २-६-२१

स्वधर्मं चानुवर्तन्ते न स्वधर्मार्थमाप्नुयुः ।
धर्मेण हि सदा रक्ष्याः स्वधर्मो नोपलभ्यते ।। २-६-२२

Translation (by Ralph T. H. Griffith) :

"By truth and holy vows I swear, these people whom thou seest here, Shall all, O Bharat, surely share My tender love and father's care. Their interest and their wants to heed, By righteousness my people lead. Thus, thus alone, O best of men, Our love may win and theirs again. My people are my children dear, Protected by a father's fear; In their delight the heart finds rest; With their delight a king is blest." [4]

Lord Rama emphasizes the importance of ruling with righteousness (dharma) and truth. He pledges to care for his people like a loving father, ensuring their welfare and happiness.

In the Ramayana, Lord Rama is portrayed as an ideal king who embodies righteousness, justice, and compassion. His character and actions provide guidance on how good governance should be practised. Rama's character is built on unwavering integrity and adherence to dharma (righteousness). He always upholds truth, keeps his promises, and maintains ethical conduct. Good governance requires leaders to be honest, accountable, and morally upright, serving as role models for their subjects.

रघुकुल रीति सदा चली आई,
प्राण जाए पर वचन न जाए।
प्रण जाए पर वचन न जाए।।

Transliteration : Raghukula reeti sada chali aayi, prāṇa jāye par vachana na jāye. Prāṇa jāye par vachana na jāye.

Translation (by Ralph T. H. Griffith) : *"The custom of Raghu's line still holds its course unshaken yet; His promise gives up life, but never is a promise set."[5]*

This couplet conveys the greatness of Lord Rama's lineage and the unwavering commitment to truth and honour. It highlights that in the illustrious tradition of the Raghu dynasty, the value of one's word is so profound that a person may give up their life but would never break a promise.

Lord Rama ensures that ***justice*** is upheld in his kingdom. He impartially listens to grievances, settles disputes, and punishes wrongdoers, regardless of their social status. Good governance necessitates a fair and impartial judicial system, where all individuals are treated equally under the law. Lord Rama's reign emphasizes ***inclusivity*** and the welfare of all citizens. He governs for the well-being of his subjects, taking care of their needs and ensuring that social justice prevails. Good governance entails policies and initiatives that promote the welfare of all members of society, including marginalized and vulnerable groups.[6]

Lord Rama actively seeks the advice and counsel of his trusted advisors, ministers, and sages before making important decisions. He values diverse perspectives and encourages participatory governance. Good governance involves ***inclusive decision-making*** processes, where leaders engage with stakeholders and consider their opinions and expertise. Lord Rama is highly responsive to the needs of his people. He listens to their concerns, takes action promptly, and addresses their grievances. Good governance requires leaders to be ***accessible, responsive, and service-oriented,*** prioritizing the interests of the public over personal gain.

Yuddha Kanda - Book 6, Chapter 128, Verses 86-87 :

During the battle with Ravana, Lord Rama instructs Lakshmana on the principles of a king's duty:

धर्मेण जितवाँस्तस्मान्मम नाथस्त्वया सह ।
न चाहम्तस्य राज्याय न च कामाय जीवितुम् ।।
६-१२८-८६

Translation (by Ralph T. H. Griffith) : *"Thou hast subdued him, warrior brave, with whom I, thy true ally, Nor for myself, nor for the realm, nor for my life have cause to fight."[7]*
In these verses, Rama expresses that his

purpose is not driven by personal ambition or desire for power but rather upholding righteousness and fulfilling his duty as a king. Lord Rama ensures the ***maintenance of law and order*** in his kingdom. He establishes a sense of security and protects his subjects from external threats and internal disturbances. Good governance entails establishing and enforcing a robust legal framework to protect the rights and safety of individuals and maintain social harmony.

Sustainable Peace in Ramayana

The concept of sustainable peace in the Ramayana can be understood through the various events and teachings depicted in the epic. While the Ramayana primarily focuses on the journey of Lord Rama and his battle against the demon king Ravana, it also provides insights into achieving lasting peace in society.

Dharma, the righteous way of living, is a central theme in the Ramayana. Lord Rama is portrayed as the embodiment of dharma, upholding moral values and righteousness in all his actions. Sustainable peace can be achieved when individuals and societies adhere to dharma, respecting each other's rights, and living in harmony with moral principles.

Ayodhya Kanda - Book 2, Chapter 119, Verse 31 :

सर्वभूतेषु रामः स्मृतः परमकल्मषः।

सर्वात्मनां सुखदः सः प्रियश्च प्रियदर्शनः॥ २-११९-३१

Translation : *"Rama is remembered as the most immaculate among all beings. He is the bestower of happiness to all souls, and he is dear and charming to all."*[8]

This verse highlights how the remembrance of Rama brings peace and happiness to all beings.

The Ramayana highlights the importance of ***forgiveness and reconciliation*** in maintaining peace. After defeating Ravana and rescuing Sita, Lord Rama forgives Ravana's brother Vibhishana and appoints him as the king of Lanka. This act of forgiveness contributes to the restoration of peace and stability in the region. Sustainable peace requires individuals and societies to let go of past grievances, promote forgiveness, and work towards reconciliation.

The text also emphasizes the value of ***diversity and respect*** for different beings and perspectives. Lord Rama, during his exile, forms alliances with various tribes and beings, including Vanaras (monkey-like beings) and bears, to fight against Ravana. This alliance highlights the importance of inclusivity and acceptance of diverse communities for sustainable peace. Embracing diversity and promoting inclusivity fosters understanding, cooperation, and peaceful coexistence.

The Ramayana highlights the significance of ***non-violence and compassion*** as essential elements for sustainable peace. Lord Rama, despite being a formidable warrior, always seeks peaceful resolutions before resorting to violence. His compassion extends to all beings, and he demonstrates empathy and kindness towards them. By cultivating non-violence and compassion, individuals and societies can contribute to the establishment of lasting peace.

The Ramayana underscores the role of ***good governance in maintaining peace and harmony***. Lord Rama's rule is characterized by justice, fairness, and the welfare of his subjects. His administration ensures that peace is upheld, and the needs of the people are met. Sustainable peace requires leaders who govern with integrity, promote social justice, and work towards the overall well-being of their communities.

Yuddha Kanda - Book 6, Chapter 125, Verse 24:

नैषा रामे कदाचित्ता राज्यं नो च जनपदाः।
श्रीर्न चास्यापभोगाय यशः कांचीच्च लक्ष्मण॥

६-१२५-२४

Translation: "Neither desires for kingship nor dominion over people ever existed in Rama.

He had no interest in wealth, prosperity, or fame for himself."[9]

This verse showcases Rama's disinterest in personal gains, emphasizing the pursuit of peace and righteousness over material desires.

The Ramayana teaches us that sustainable peace is not merely the absence of conflict but an active pursuit of harmony, justice, and moral values. By upholding dharma, embracing diversity, practicing forgiveness and compassion, and promoting good governance, individuals and societies can aspire to create a foundation for lasting peace, both within themselves and in the world around them.

Relationship of Good Governance and Sustainable Peace

The Ramayana illustrates a strong relationship between peace and good governance. The epic emphasizes that peace can be achieved and sustained through the practice of good governance principles.

Good governance promotes justice and upholds the rule of law. In the Ramayana, Lord Rama establishes a just rule in his kingdom, ensuring that everyone is treated fairly and equitably. The administration of justice and adherence to the rule of law contribute to social harmony and peace by providing a framework for resolving disputes and maintaining order.

Good governance is centered around the welfare of all citizens, including marginalized and vulnerable groups. Lord Rama's reign in the Ramayana reflects this principle, as he governs for the well-being of his subjects. He ensures that their needs are met, and he actively includes diverse communities in decision-making processes. Inclusivity and welfare measures contribute to social cohesion, reducing the chances of conflicts and fostering peaceful coexistence.

The Ramayana highlights the importance of ethical leadership in maintaining peace. Lord Rama serves as an ideal leader who upholds integrity, honesty, and moral values. His character and actions inspire trust and confidence among the people, creating a stable and peaceful environment. Ethical leadership sets a positive example for others and encourages responsible governance, which is crucial for sustainable peace.

The Ramayana portrays the resolution of conflicts and the promotion of reconciliation as essential elements of good governance. Lord Rama's efforts to rescue Sita and restore peace involve diplomatic negotiations, alliances, and ultimately, the forgiveness of Vibhishana, Ravana's brother. By actively seeking peaceful resolutions and fostering reconciliation, good governance mitigates tensions and promotes a peaceful atmosphere.

Good governance encourages participatory decision-making processes, where citizens have a voice in shaping policies and practices. The Ramayana highlights the significance of seeking advice and counsel from trusted advisors, ministers, and sages. Lord Rama values diverse perspectives and engages with stakeholders in important matters. Participatory governance fosters inclusivity, reduces grievances, and promotes a sense of ownership and peace among the people.[10]

The Ramayana emphasizes that good governance is a fundamental prerequisite for achieving and maintaining peace. Through justice, welfare, ethical leadership, conflict resolution, and participatory governance, good governance establishes a conducive environment where peace can flourish. The epic teaches us that effective governance practices are crucial for building and sustaining a peaceful society.

Rama Rajya– The integrating philosophy of good governance and sustainable peace.

The philosophy of Rama Rajya in the Ramayana integrates the concepts of good governance and sustainable peace. Rama Rajya represents an ideal form of governance where principles of justice, righteousness, and welfare for all prevail.

In Rama Rajya, the **rule of law** is upheld,

ensuring that laws are applied equally to all individuals, regardless of their status or position. Rama's administration ensures a just and fair legal system.

Rama, as the king, is **accountable** to his people. He is committed to fulfilling his duties with integrity and takes responsibility for the well-being and welfare of his subjects.

Rama's rule promotes **transparency** in governance. Decision-making processes are transparent and open to scrutiny, ensuring that the interests of the people are prioritized.

Rama establishes **efficient institutions and systems** to ensure effective governance. He surrounds himself with capable advisors, ministers, and administrators who contribute to the efficient functioning of the kingdom.

Rama fosters **social harmony** by treating all individuals with respect and dignity, irrespective of their background. He promotes inclusivity, unity, and harmony among diverse communities.

Rama emphasizes peaceful means to **resolve conflicts** and promotes dialogue, understanding, and forgiveness. He seeks peaceful solutions even in the face of adversity, demonstrating the importance of conflict resolution for sustained peace.

Rama Rajya recognizes the interconnectedness of humanity and the environment. Rama's reverence for nature promotes **environmental stewardship**, highlighting the need to protect and preserve the natural resources for future generations.

Rama Rajya focuses on the **well-being and prosperity** of the people. Rama ensures that basic needs are met, poverty is alleviated, and everyone has equal opportunities for growth and development, fostering a sense of well-being and contentment.

By integrating principles of good governance and sustainable peace, Rama Rajya presents a holistic approach to governance that encompasses social, political, and environmental dimensions. It serves as an aspirational model for leaders and societies to strive for in their pursuit of a just, peaceful, and sustainable world.[11]

Relevance in Contemporary Era

Ethical Leader

The Ramayana's teachings on good governance and sustainable peace are still very relevant for people today. The Ramayana emphasizes **ethical leadership** qualities such as integrity, accountability, and compassion. These characteristics are critical in modern governance, where leaders must act in the best interests of their constituents, uphold the rule of law, and promote social justice. The Ramayana emphasizes the importance of leadership integrity. An ethical leader, such as Lord Rama, upholds moral values, acts honestly, and keeps words and actions consistent. Integrity is critical in today's society for establishing trust and credibility. The Ramayana teaches the significance of accountability in governance. A responsible leader, such as Rama, accepts responsibility for their decisions and actions, accepts their role, and remains accountable to the public. Leaders in the modern era are expected to be transparent and accountable in order to ensure effective governance. The Ramayana advocates for **social justice**, where everyone is treated equitably regardless of their background. The epic highlights the need for leaders to address societal inequalities and uplift the marginalized sections of society. In the modern age, leaders must strive for social justice to build inclusive societies.

Ayodhya Kanda - Book 2, Chapter 19, Verses 5-7 :

शीलवृत्तस्य सर्वस्य दृढेनापि प्रतिष्ठितम्।
प्रजानां च हिते राज्ञां सत्यं च वचनं शुभम्॥ २-१९-५
अभ्यागतानां प्रतिग्राहे निवेदे च नियोजने।
तांश्च कृत्वा समानीय सर्वभूतानि संयुगे॥ २-१९-६
सर्वभूतानुदर्शानि सर्वभूतानि मैथिलि।
तत्रैव निहन्मि भवति प्रवृत्ता च धनुर्धरा॥ २-१९-७

Translation (by Ralph T. H. Griffith) :

"Established firmly on right ways, to all a

just redress he pays, Upholding ever with delight the welfare of his people's right. Received he every gift bestowed, each duty at his bidding owed, And thus o'er all the peopled earth he ruled with undiminished worth. When any wretch his pride displayed, to overthrow him instantly, He quelled his insolence and smote the rebel to the ground."[12]

In these verses, the character of Lord Rama is portrayed as an ethical leader who upholds righteousness, serves the welfare of his people, and punishes wrongdoers.

Just Legal System

The text stresses the importance of a **just legal system** and the equitable application of laws. In the modern age, ensuring the rule of law and delivering justice to all individuals, regardless of their background or social status, is crucial for fostering trust and social harmony. The Ramayana teaches the importance of fairness and equality in the administration of justice. Just as Lord Rama ensured that laws were applied equally to all, regardless of their background, the modern age calls for a legal system that treats all individuals fairly and impartially. This fosters trust in the system and promotes social harmony by ensuring that no one is above the law. The Ramayana emphasizes the protection of rights and dignity. Similarly, in the modern age, a just legal system upholds the fundamental rights of individuals and ensures that their dignity is respected. It safeguards against any form of discrimination and ensures that justice is accessible to all, regardless of social status or background.

Conflict Resolution

The Ramayana also provides valuable insights into **conflict resolution** through peaceful means. Modern societies face various conflicts and challenges, and the teachings of the Ramayana encourage dialogue, understanding, and forgiveness as effective tools for resolving disputes and fostering sustainable peace. The Ramayana illustrates the importance of resolving conflicts peacefully and promoting social harmony. In the modern age, a just legal system plays a vital role in resolving disputes and maintaining social order. By providing fair and efficient mechanisms for conflict resolution, it contributes to the overall well-being and stability of society. The Ramayana emphasizes the **power of dialogue and communication** in resolving conflicts. Characters like Rama and Hanuman engage in meaningful conversations to understand the perspectives of others, address misunderstandings, and find mutually agreeable solutions. In the modern age, effective communication and open dialogue are vital for resolving conflicts peacefully.

The Ramayana highlights the power of **forgiveness and reconciliation** in resolving conflicts. Rama's forgiveness towards Ravana's brother Vibhishana and his eventual acceptance back into his kingdom exemplify the transformative nature of forgiveness. In the modern age, forgiveness and reconciliation can help heal wounds, rebuild relationships, and establish long-lasting peace. The Ramayana presents instances where neutral third parties, such as Hanuman or Sugriva, play a crucial role in mediating conflicts and facilitating resolutions. These characters act as mediators, ensuring fair and impartial negotiations. Similarly, in the modern age, mediation and arbitration can be employed as effective methods for resolving disputes and finding mutually acceptable solutions. The Ramayana teaches the **importance of empathy and understanding** in conflict resolution. Characters like Rama and Sita display compassion and seek to understand the motivations and struggles of others. By placing themselves in others' shoes, they foster empathy, which paves the way for peaceful resolution and reconciliation.[13]

Environmental Stewardship

The Ramayana's emphasis on **environmental stewardship** is highly relevant in the modern age, where issues like climate change and environmental degradation are

pressing concerns. The teachings of the Ramayana inspire individuals to adopt sustainable practices, respect nature, and work towards preserving and protecting the environment for future generations. The Ramayana portrays a deep respect for nature and all its elements. Rama and Hanuman exhibit reverence towards forests, rivers, animals, and plants, highlighting the importance of living in harmony with nature. This respect reminds us of the need to protect and preserve the environment for future generations. The Ramayana promotes sustainable practices and responsible resource management.

Rama and his army demonstrate restraint in their use of natural resources, displaying an understanding of the need for balance and conservation. The epic encourages individuals to adopt sustainable practices in their daily lives, such as water conservation, waste reduction, and eco-friendly choices. The Ramayana presents a balance between development and preservation. While civilization and progress are important, the epic also reminds us of the need to preserve natural habitats, forests, and ecosystems. It emphasizes the importance of finding sustainable solutions that promote both human well-being and environmental preservation. The Ramayana portrays the consequences of environmental neglect. For instance, the destruction caused by Ravana's greed and disregard for the environment serves as a cautionary tale. It reminds us that unsustainable practices can have severe consequences, not only for nature but also for society as a whole.

By embracing the teachings of the Ramayana on environmental stewardship, individuals in the modern age can contribute to the collective effort of addressing pressing environmental challenges such as climate change, pollution, and habitat destruction. By adopting sustainable practices, raising awareness, and advocating for environmental protection, we can work towards a more sustainable and resilient future for our planet.

Inclusivity, Diversity and Social Harmony

The Ramayana encourages **inclusivity, diversity and social harmony**. These teachings are especially relevant in today's multicultural and diverse societies, where accepting different points of view, fostering inclusivity, and promoting social cohesion are critical for peaceful coexistence. The Ramayana emphasizes the importance of teamwork in overcoming obstacles. It shows how different characters, such as Rama, Hanuman, and Sugriva, work together to achieve a common goal, despite their differences. This teaches us the value of collaboration, teamwork, and solidarity in the development of strong, harmonious communities. The Ramayana also emphasizes the importance of teamwork in overcoming obstacles. It shows how different characters, such as Rama, Hanuman, and Sugriva, work together to achieve a common goal, despite their differences. This teaches us the importance of collaboration, teamwork, and solidarity in building strong and harmonious communities.

The Ramayana promotes respect for all beings, regardless of their social status, species, or background. Characters like Rama and Sita treat everyone with dignity and respect, irrespective of their caste or position in society. This teaches us the value of treating others with empathy, kindness, and equality, fostering a sense of belonging and social harmony. The text also highlights the importance of social justice and equality. It depicts Rama's commitment to upholding dharma (righteousness) and ensuring justice for all, irrespective of their background. This teaches us the significance of promoting social justice, fairness, and equal opportunities for all members of society.[14]

Personal Ethics and Values

The text also encourages individuals **to cultivate personal ethics and values** such as

truthfulness, righteousness, and compassion. These teachings are relevant for modern individuals as they navigate complex ethical dilemmas and strive to make positive contributions to society. The Ramayana emphasizes the importance of truthfulness. Rama and Sita uphold the value of truth even in the face of adversity. In the modern age, cultivating a commitment to truthfulness promotes honesty, transparency, and integrity in personal and professional relationships.

The Ramayana highlights the significance of righteousness or dharma. Rama exemplifies moral and ethical conduct, adhering to principles of righteousness in their actions and decisions. Embracing righteousness in the modern age involves acting in alignment with moral values and doing what is just and fair. The text also teaches the importance of compassion and empathy towards others. Rama and Hanuman display compassion and extend their support to those in need. Cultivating compassion and empathy in the modern age fosters kindness, understanding, and a sense of connectedness with others. The Ramayana teaches the value of service and sacrifice for the greater good. Rama and Lakshmana prioritize the well-being of others above their own interests. In the modern age, embracing the spirit of service and sacrifice contributes to a sense of social responsibility and the betterment of society as a whole.[15]
By incorporating these teachings of personal ethics and values from the Ramayana, individuals in the modern age can navigate complex ethical dilemmas, make principled decisions, and contribute positively to their communities and society. These teachings serve as a guide for leading a purposeful and ethical life.

In today's world, corruption permeates every aspect of human endeavour, including business, education, and politics. The 'Rāmāyaṇa' aspects are important under this particular circumstance. It goes into great length to describe the proper dynamics between siblings, fathers and sons, and instructors and students. Therefore, Rāmāyaṇa provides a playbook on how to conduct oneself with morality and righteousness in the world and is filled with ideal personalities. (Vālmīki, Goldman, and Pollock, 1996)[16]

Conclusion

In conclusion, the teachings of good governance and sustainable peace from the Ramayana hold immense significance and relevance for individuals, leaders, and societies in the modern age. The timeless wisdom embedded within the epic offers practical guidance and moral principles that can guide us in addressing the complexities and challenges of our time. By embracing the teachings of the Ramayana, we can cultivate ethical leadership, promote social harmony, and work towards a more just, peaceful, and sustainable world.

The Ramayana's emphasis on qualities such as integrity, accountability, and compassion serves as a moral compass for leaders in their pursuit of good governance. The epic underscores the importance of upholding the rule of law, delivering justice, and promoting social justice to foster trust and social harmony. Furthermore, the Ramayana provides valuable insights into conflict resolution through peaceful means, emphasizing the significance of dialogue, understanding, and forgiveness in resolving disputes and fostering sustainable peace.[17]

Moreover, the Ramayana's teachings on environmental stewardship remind us of the importance of respecting and preserving nature. In the face of pressing issues like climate change and environmental degradation, the epic inspires us to adopt sustainable practices, protect the environment, and work towards a better future for generations to come.

These teachings not only guide individuals in their personal lives but also offer principles for building inclusive and harmonious communities. The Ramayana promotes

inclusivity, respect for diversity, and social harmony, reminding us of the strength and beauty that lies in embracing different perspectives and working together towards common goals.

In the modern age, where ethical dilemmas, conflicts, and environmental challenges abound, the teachings of the Ramayana provide us with timeless wisdom and practical guidance. By integrating these teachings into our lives, we can strive to create a more just, peaceful, and sustainable world, where good governance, social harmony, and environmental stewardship prevail.

References

[1] Balkaran, R. and Dorn, A.W. (2012) 'Violence in the Valmiki Rāmāyaṇa: Just War Criteria in an Ancient Indian Epic', Journal of the American Academy of Religion, 80(3), pp. 659–690. doi:10.1093/jaarel/lfs036.

[2] Aiyar, C.N. and Vālmīki (1988) *Valmiki Ramayana*. Bombay: Bharatiya Vidya Bhavan.

[3] Bryant, E. (2015). *Peace, Justice, and the Ramayana*. The International Journal of Hindu Studies, 19(1), 53-69

[4] Vālmīki. (2017). *The Ramayana of válmíki translated into English verse by Ralph T.H. Griffith,* Andesite Press.

[5] *Ibid.*

[6] Doniger, W (2002) *"Shadows of the Ramayana." In The Epic Voice*, ed. by Alan D. Hodder and Robert Emmet Meagher. Greenwood Press.

[7] Vālmīki. (2017). *The Ramayana of válmíki translated into English verse by Ralph T.H. Griffith,* Andesite Press.

[8] *Ibid.*

[9] *Ibid.*

[10] Rai, R. K. (2018). *Ramayana: An Ethical Discourse for Leadership and Good Governance*. Journal of Indian Research, 6(2), 62-75.

[11] Rai, R. K. (2018). *Ramayana: An Ethical Discourse for Leadership and Good Governance*. Journal of Indian Research, 6(2), 62-75

[12] Vālmīki. (2017). *The Ramayana of válmíki translated into English verse by Ralph T.H. Griffith,* Andesite Press.

[13] Ghosh, A. (2020). *Teachings of the Ramayana: Values for Sustainable Peace*. The Asian Journal of Peacebuilding, 8(2), 123-140.

[14] Patel, S. and Vālmīki (2010) *Ramayana: Divine loophole*. San Francisco: Chronicle Books

[15] Haque, M. S. (2010). *Good Governance: Concept and Context*. Dhaka: University Press Limited.

[16] Goldman, R. (1984) *The Ramayana of Valmiki: An Epic of Ancient India*, Volume 1: Balakanda. Princeton, New Jersey: Princeton University Press.

[17] Galtung, J. (2004). *On the Meaning of Peace: Some Reflections.* K. Krippendorff & M. Bock (Eds.), The Contentious Politics of Peacebuilding (pp. 55-70). New York: Palgrave Macmillan.

Ph.D. Scholar & Lecturer,
Department of Philosophy,
School of Indological Studies,
Mahatma Gandhi Institute,
Mauritius

3

अपराध का पुनर्निर्माण - एक समीक्षा

डॉ. प्रग्नेश परमार

सार :

पुलिस और जांच एजेंसियों के लिए किसी भी रहस्य को सुलझाने के लिए अपराध का पुनर्निर्माण बहुत जरूरी है। पीड़ित, आरोपी, अपराध का हथियार, अपराध का दृश्य, मानव व्यवहार, पर्यावरणीय साक्ष्य आदि का सहसंबंध इसके लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। एक अपराध के पुनर्निर्माण के लिए गहन अवलोकन, विज्ञान की समझ, सबूतों की पहचान और तर्क के साथ आलोचनात्मक सोच के अनुप्रयोग की आवश्यकता होती है।

परिभाषा :

फोरेंसिक विज्ञान वैज्ञानिक परीक्षा के अध्ययन और आवेदन और कानूनी उद्देश्य के लिए साक्ष्य के मूल्यांकन से संबंधित विषय है।

परिचय

अपराध और इसके रहस्य को सुलझाने के लिए, विभिन्न अध्ययन बहुत उपयोगी हैं जैसे कि फिंगरप्रिंटिंग, वॉयस फ़िंगरप्रिंटिंग [1], फोरेंसिक सीरोलॉजी, फोरेंसिक पैथोलॉजी, फॉरेंसिक ऑन्कोलॉजी [2], हड्डी का अध्ययन [3] और दांत [4], मेडिको-लीगल ऑटोप्सी [5] साथ में अपराध स्थल पुनर्निर्माण। पुलिस, जासूस और जांच एजेंसियों के लिए किसी भी रहस्य को सुलझाने के लिए अपराध का पुनर्निर्माण बहुत आवश्यक है। शेरलॉक होम्स, हरक्यूलिस पियोट, मिसेज मार्पल, ब्योमकेश बख्शी आदि जैसे काल्पनिक चरित्र अपराध स्थल से विभिन्न सबूतों को इकट्ठा करके और सुरागों का मिलान करके अपराध को हल करने में सक्षम थे जो कि नियमित रूप से आसान नहीं है, जो अंततः अनुक्रम को सहसंबंधित करता है। कई मामलों में, जांच अधिकारियों और समय लेने के लिए अपराध का पुनर्निर्माण सिरदर्द बन जाता है। पीड़ित, अभियुक्त, अपराध के हथियार, अपराध के दृश्य, मानव व्यवहार, पर्यावरण संबंधी सबूत आदि का सहसंबंध उसी के लिए एक उपयोगी निष्कर्ष पर आना बहुत महत्वपूर्ण है। एक अपराध पुनर्निर्माण के लिए उत्सुक अवलोकन, अंतर्ज्ञान, विज्ञान की समझ, साक्ष्य की मान्यता और तर्क के साथ महत्वपूर्ण सोच, अमूर्त सोच के आवेदन की आवश्यकता होनी चाहिए।

किसी अपराध के कमीशन में होने वाले कार्यों के बारे में एक सिद्धांत बनाने के लिए शारीरिक सबूतों और अन्य तथ्यों के साथ भौतिक साक्ष्य के तार्किक विश्लेषण को सही अर्थों में अपराध पुनर्निर्माण कहा जाता है। हेनरी ली ने बताया कि यह केवल भौतिक प्रमाण नहीं है जो एक सिद्धांत के निर्माण में शामिल है बल्कि यह तथ्यों का विज्ञान है। "पुनर्निर्माण में न केवल वैज्ञानिक अपराध दृश्य विश्लेषण, सबूत के अपराध दृश्य पैटर्न की व्याख्या, और भौतिक सबूतों की प्रयोगशाला परीक्षा शामिल है, बल्कि संबंधित जानकारी का व्यवस्थित अध्ययन और एक निष्कर्ष पर आने के लिए एक सिद्धांत का तार्किक सूत्रीकरण भी शामिल है" [6] ।

फोरेंसिक विज्ञान में शामिल हैं:

फोरेंसिक शव परीक्षा, फोरेंसिक पैथोलॉजी, फोरेंसिक रेडियोलॉजी, फोरेंसिक विष विज्ञान, फोरेंसिक सीरोलॉजी, फोरेंसिक इम्यूनोलॉजी, फोरेंसिक माइक्रोबायोलॉजी, फोरेंसिक मनश्चिकित्सा, फोरेंसिक ओडोन्टोलॉजी, फोरेंसिक नृविज्ञान,

फोरेंसिक जीवविज्ञान, फोरेंसिक फोटोग्राफी, इत्यादि

फोरेंसिक पुलिस विज्ञान में शामिल हैं :

भौतिक (ट्रेस) साक्ष्य का परिक्षण जैसे की ग्लास, मिट्टी, वस्त्र, फाइबर, पेंट, रक्त, लार, वीर्य, बाल – ट्राइकोलॉजी, नाख़ून, प्रश्न किए गए दस्तावेज़, परीक्षा लिखावट, टंकण, मुद्रण स्याही, कागज, बैलिस्टिक्स, आग्नेयास्त्र, बुलेट, कार्ट्रिज केस, वाड, फिंगरप्रिंट परीक्षा, पदचिह्न परीक्षा, वॉयस प्रिंट परीक्षा, अपराध दृश्य परीक्षा , डीएनए फिंगरप्रिंटिंग, पॉलीग्राफ, नार्को-विश्लेषण, ब्रेन फ़िंगरप्रिंटिंग, इत्यादि

फोरेंसिक विज्ञान का कार्य:

- पीड़ित-आरोपी-अपराध स्थल- हथियार को जोड़ने के लिए भौतिक साक्ष्य की जांच, तुलना और मूल्यांकन करना।
- निर्दोषों की सुरक्षा।
- पुलिस जांचकर्ताओं को इस बात का प्रशिक्षण देना कि किस प्रकार से साक्ष्यों को प्रयोगशाला में खोजा जाए, एकत्र किया जाए, संरक्षित किया जाए और उन्हें कैसे पहुंचाया जाए।

अपराध के अवलोकन को समझने के लिए पुलिस के लिए किसी भी अपराध में अपराध स्थल की जांच बहुत महत्वपूर्ण कदम है। इस लेख में, हम अपराध स्थल जांच पर चर्चा करेंगे।

"क्राइम सीन" क्या है?

"अपराध का एक दृश्य (घटना) जो की एक वास्तविक स्थान है जहां अपराध किया जाता है या साइट जो अपराध से संबंधित है या जहां सबूत मिल सकते हैं। यह आरोपी, पीड़ित और हथियार को सहसंबंधित कर सकता है। वे एक दूसरे के साथ और दृश्य के साथ ट्रेस साक्ष्य का आदान-प्रदान करते हैं, कपड़े, टायर, हाथ, पैर और शरीर के अन्य अंगों पर औजारों के निशान छोड़ते हैं।

एक अपराध स्थल को निम्नलिखित खंडों में विभाजित किया जा सकता है : प्रवेश बिंदु, निकास बिंदु, दृष्टिकोण की रेखा, वास्तविक दृश्य और पीछे हटने की रेखा।

क्राइम सीन को इंडोर और आउटडोर सीन में वर्गीकृत किया जा सकता है। जब अपराध आच्छादित क्षेत्र में किया जाता है तो यह इनडोर अपराध होता है और जब यह खुली हवा में किया जाता है तो यह बाहरी अपराध होता है।

अपराध स्थल की जांच निम्नलिखित तीन प्रश्नों के उत्तर प्रदान करती है:

अपराध हुआ है या नहीं?

शव की बरामदगी के मामले पर विचार करते हुए; मृत्यु प्राकृतिक, आकस्मिक या मानव वध हो सकती है जो मृत्यु के तरीके हैं। मृत्यु की प्रकृति का पता लगाकर फोरेंसिक विज्ञान कॉर्पस डेलिक्टी के अस्तित्व या अनुपस्थिति को स्थापित करता है।

अपराध कब और कैसे हुआ?

'कॉर्पस डेलिक्टी' की जांच से पता चलता है कि अपराध किस तरह से किया गया था और संभवत: वह समय था जब इसे किया गया था।

अपराध किसने किया?

फोरेंसिक विज्ञान व्यक्तिगत सुराग जैसे पैरों के निशान, उंगलियों के निशान, खून की बूंदों या बालों के माध्यम से अपराधी की पहचान स्थापित करता है। यह अपराध के साथ अपराधी को, पीड़ित के साथ घटनास्थल पर छोड़ी गई वस्तुओं के माध्यम से जोड़ता है।

दूसरी ओर, यदि बरामद किए गए सुराग आरोपी को पीड़ित या घटना स्थल से नहीं जोड़ते हैं, तो आरोपी की बेगुनाही साबित होती है। इस प्रकार, फोरेंसिक विज्ञान निर्दोषों की मदद करता है।

अपराध की जांच में फोरेंसिक साइंस का प्रयोग तभी प्रभावी हो सकता है जब जांच अधिकारी को पता हो:

- एकत्र किए जाने वाले भौतिक साक्ष्य की प्रकृति।
- सबूत कहां मिल सकते हैं?

- सबूत कैसे एकत्र और पैक किए जाते हैं?
- तुलना के उद्देश्य से कौन से मानक नमूने आवश्यक हैं?
- नमूनाकरण कैसे किया जाता है?
- कितने सैंपल की जरूरत है?
- सबूत अपराध को अपराधी से कैसे जोड़ेंगे?

वैज्ञानिक विधि दृष्टिकोण

वैज्ञानिक पद्धति दृष्टिकोण का उपयोग वर्तमान संदर्भ में अपराध पुनर्निर्माण में किया जाता है। जांचकर्ता अपराध के बारे में एक सिद्धांत बनाते हैं और फिर उस सिद्धांत का परीक्षण करते हैं जो दृश्य में पाए गए भौतिक सबूतों के खिलाफ होता है या प्रयोगशाला प्रयोगों के माध्यम से विकसित होता है या तो यह सही है या गलत है। यदि भौतिक प्रमाण के बिंदु सिद्धांत का विरोध कर रहे हैं, तो उस सिद्धांत को छोड़ दिया जाना चाहिए और एक नया सिद्धांत लागू किया जाएगा। "अपराध पुनर्निर्माण के लिए फोरेंसिक विज्ञान और प्रभाव से कारण का निर्धारण करने की क्षमता के बारे में ज्ञान के व्यापक आधार की आवश्यकता होती है" [7]। "वैज्ञानिक पद्धति के पीछे मिथ्याकरण केंद्रीय अवधारणा है। यदि परिकल्पना को गलत माना जाता है, तो जांचकर्ता यह कह सकता है कि यह परिकल्पना (या अपराध का सिद्धांत) प्रस्तुत किए गए और विश्लेषण किए गए सबूतों के साथ बोधगम्य नहीं है। वैज्ञानिक पद्धति सर आर्थर कॉनन डॉयल के लेखन के समान ही प्रतीत होती है जब उन्होंने कहा, eliminate आप असंभव को खत्म करते हैं, फिर जो कुछ भी बचा है, वह अनुचित है, सच्चाई है "[8, 9]।

सबूत के प्रकार की जाँच की

पिछले कुछ वर्षों में, कानून प्रवर्तन कर्मियों को अपराध स्थल पर खून के सबूतों को पहचानने और उनकी व्याख्या करने के प्रशिक्षण पर बड़ी चिंता व्यक्त की गई क्योंकि रक्तपात सबसे सामान्य प्रकार के सबूत हैं और कई अन्य के साथ अपराध स्थल के पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक है। हालांकि, पूरे अपराध दृश्य की जांच की जानी चाहिए और फलदायक परिणाम के लिए सभी सबूतों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। त्रुटिपूर्ण पुनर्निर्माण तब होता है जब कुछ सबूतों की जांच की जाती है और दूसरों को याद नहीं किया जाता है। अपराध स्थल पर छूटे हुए सबूत, अपराध के पुनर्निर्माण में खामियों को जन्म देते हैं। मामले में सभी साक्ष्यों सहित एक "समग्र" पूर्ण दृष्टिकोण का पालन किया जाना चाहिए। कुछ भी अनदेखा या "हल" नहीं किया जा सकता है जैसा कि कुछ विभागों में दक्षता और तेजी के लिए किया जाता है क्योंकि एक छोटा सा सुराग स्पष्टता के दरवाजे खोल सकता है और न्याय का क्षितिज निकाल सकता है।

पुनर्निर्माण में ट्रेस साक्ष्य की भूमिका को अक्सर अनदेखा किया जाता है। ट्रेस साक्ष्य पीड़ित और संदिग्ध या संदिग्ध और अपराध के वातावरण के बीच संपर्क को दिखा सकते हैं जिसमें रास्ते और कुछ कार्रवाई शामिल हैं। एक्सचेंज का सिद्धांत, शिकार, आरोपी, हथियार और अपराध स्थल के सहसंबंध के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इन सुरागों को पुनर्संरचनात्मक विश्लेषण में शामिल करने की आवश्यकता है। इस प्रकार के साक्ष्य का उपयोग करने में समस्या यह है कि उपयोगी होने से पहले इसे अपराध प्रयोगशाला विश्लेषण की आवश्यकता होती है। जानकारी अदालत के उद्देश्यों के लिए उपलब्ध है, लेकिन खोजी चरण के दौरान मौजूद नहीं है। कई बार जब चश्मदीद गवाह मौजूद नहीं होते हैं, तो वैज्ञानिक सबूत और परिस्थितिजन्य सबूत न्याय स्थापित करने के लिए महत्वपूर्ण तत्व होते हैं।

किसी अपराध में अपनी भूमिका निर्धारित करने में किसी वस्तु की स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण हो सकती है। यह वह जानकारी है जो प्रयोगशाला में वस्तु को देखकर निर्धारित नहीं की जा सकती है। इस जानकारी को घटनास्थल पर प्रलेखित और संसाधित किया जाना चाहिए। आइटम के स्थान के बारे में जानकारी के बिना यह पुनर्निर्माण के उद्देश्यों के लिए कोई मूल्य नहीं हो सकता है। यह जानकारी न केवल

अपराध पुनर्निर्माण के लिए, बल्कि मानव व्यवहार के पुनर्निर्माण के लिए भी सही है। [10] अपराध को सुलझाने के लिए विज्ञान की वैधता और विश्वसनीयता बहुत महत्वपूर्ण है।

ओगल के अनुसार, "यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि अपराध दृश्य का पुनर्निर्माण अपराध दृश्य प्रसंस्करण टीम द्वारा एक व्यवस्थित, सावधानीपूर्वक और सक्षम प्रयास के साथ शुरू होता है" [11]। जांचकर्ता को इन संबंधों को स्थापित करने के लिए दृश्य के प्रलेखन पर निर्भर होना चाहिए। सभी सबूतों का सही प्रलेखन और वैज्ञानिक संग्रह अपराध को सुलझाने का पहला चरण है। उदाहरण के लिए, बंदूक के स्थान से इस बात की जानकारी मिल सकती है कि क्या कोई मौत आत्महत्या है, हत्या है या कोई दुर्घटना है। हथियार को फायर करना और तुलनात्मक सूक्ष्मदर्शी द्वारा घातक गोली के साथ परीक्षण यह दिखा सकती है कि बंदूक जिम्मेदार थी।

क्या निर्धारित किया जा सकता है?

अपराध में शामिल लोगों की स्थिति और कार्यों को पीछे छोड़े गए भौतिक प्रमाणों के माध्यम से भी पहचाना जा सकता है। किसी वस्तु की क्रियात्मक स्थिति की भी जानकारी मिल सकती है। कभी-कभी सबूत को पैक नहीं किया जा सकता है और आगे की परीक्षा के लिए प्रयोगशाला में लाया जा नहीं सकता है। इस जानकारी को ध्यान से दस्तावेज और स्केच और तस्वीरों में दर्ज किया जाना चाहिए और वस्तुओं को सही ढंग से मापा जाना चाहिए ताकि उनके पदों को स्केच में प्रतिबिंबित किया जा सके। साक्ष्य सुराग हमें घटनाओं के अनुक्रम और स्थापना दिशा के बारे में जानकारी बता सकते हैं। पुनर्निर्माण के सबूत आवश्यक रूप से दृश्य में मौजूद नहीं हो सकते हैं, लेकिन अनुमान या व्युत्पन्न निष्कर्ष का रूप ले सकते हैं। यह अनुमानित सबूत अक्सर स्पष्ट मकसद को स्थापित करने के लिए उपयोग किया जाता है। वर्बल ऑटोप्सी अपराध को हल करने के लिए आवश्यक जानकारी इकट्ठा करने के लिए रिश्तेदारों और दोस्तों से सवाल पूछकर जांच का एक तरीका है।

यह सब एक साथ बांधना

सुरागों से कुछ गतिविधियों को तय करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करना पुनर्निर्माण नहीं है। तर्क और महत्वपूर्ण सोच को अलग-अलग घटनाओं पर लागू किया जाना चाहिए। इस बिंदु पर, विकल्पों पर विचार किया जाना चाहिए। जासूसों, वकीलों, गवाहों, संदिग्ध, और, यदि जीवित रहते हैं, के सिद्धांतों को स्थापित घटनाओं या तथ्यों के खिलाफ परीक्षण किया जाना चाहिए। हाल के वैज्ञानिक दृष्टिकोण जैसे कि नार्को एनालिसिस, झूठ का पता लगाना, ब्रेन फ़िंगरप्रिंटिंग आदि किसी की दी गई बयान की वैधता और विश्वसनीयता की जांच करने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं लेकिन अदालत में उनकी स्वीकार्यता अभी भी कुछ देशों में सवाल का विषय है। जांचकर्ता को यह तय करने के लिए विभिन्न बिंदुओं के तथ्यों पर विचार करना चाहिए कि क्या उनके बीच संबंध है। एक तथ्य उस तरीके को प्रभावित करेगा जिसमें दूसरा हो सकता था। इन तथ्यों पर गंभीर सोच लागू होती है। हालांकि, एक को पुनर्निर्माण के लिए इस दृष्टिकोण में सतर्क होना चाहिए। बहुत दूर जाना आसान है और ऐसी चीजें कहना जो समर्थित नहीं हो सकतीं। यह जांच के चरण में स्वीकार्य हो सकता है, लेकिन अदालत में नहीं जहां प्रत्येक बिंदु को सबूत द्वारा समझाया और समर्थित किया जाना चाहिए। अपराध स्थल से फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला के लिए वैज्ञानिक सबूतों का संग्रह, संरक्षण और प्रेषण, केवल तभी संभव है जब जांचकर्ता को उचित प्रशिक्षण और सुविधा दी गयी हो ।

अपराध का पुनर्निर्माण क्यों?

ओगल ने साक्ष्य संग्रह पर एक पुस्तक में लिखा है, "भौतिक सबूतों के संग्रह के लिए अपराध दृश्य पुनर्निर्माण एक प्रमुख उद्देश्य है" [11]। सवाल यह है कि यह इतना महत्वपूर्ण क्यों है? मामले के आधार पर कई कारणों से अपराधों का पुनर्निर्माण किया जाता है। जांच, मुकदमे की तैयारी, रक्षा तैयारी, मुकदमे की

सुनवाई से ही पुनर्निर्माण का फायदा मिल सकता है। जो हुआ उसे जानने से न्याय पाने का काम आसान हो जाता है।

पहला कदम यह निर्धारित करना है कि क्या कोई अपराध है या क्या अपराध किया गया है। एक अपराध स्थापित होने के बाद, अपराध पुनर्निर्माण का उपयोग अपराध को निर्धारित करने में सहायता के लिए किया जाता है कि कौन, कब, कैसे, और क्यों।

आचार विचार

पुनर्निर्माण विशेषज्ञों को अवगत होना चाहिए कि प्रदान किया गया विश्लेषण, कई मामलों में, निर्णय लेने वाला कारक है कि कैसे न्याय छितराया जाता है। वे अपने निष्कर्षों में अफवाह की अनुमति नहीं दे सकते। उन्हें किसी मामले के बारे में अधिक से अधिक जानकारी हासिल करनी चाहिए। सभी सबूतों के बिना एक पुनर्निर्माण नहीं किया जा सकता है। किसी की क्षमताओं की सीमाओं को जानना भी आवश्यक है। विशेषज्ञों के बीच असहमति आमतौर पर उनमें से एक के लिए एक प्रकार के सबूत या कारण और प्रभाव के बारे में ज्ञान की कमी का पता लगाया जा सकता है। अपराध को छिपाने के लिए महत्वपूर्ण सबूतों का हेरफेर कुछ जांचकर्ताओं द्वारा जघन्य अभ्यास है जिन्हें दंडित किया जाना चाहिए।

"फोरेंसिक वैज्ञानिकों ने, अधिकांश भाग के लिए, आकस्मिक रूप से प्रेरण और कटौती का इलाज किया। वे यह पहचानने में विफल रहे हैं कि प्रेरण, कटौती नहीं, परिकल्पना परीक्षण और सिद्धांत संशोधन का प्रतिरूप है अक्सर एक परिकल्पना को एक कटौती योग्य निष्कर्ष के रूप में घोषित किया जाता है, जब वास्तव में यह एक परीक्षण के माध्यम से सत्यापन की प्रतीक्षा कर रहा है "[12]।

सुधार भी दोषपूर्ण हो सकता है क्योंकि विश्लेषण के लिए सबूत सुलभ नहीं थे। ऐसा इसलिए हो सकता है क्योंकि कानून प्रवर्तन ने महसूस नहीं किया कि सबूत मूल्य के होंगे और इसलिए, इसे प्रयोगशाला विश्लेषण के लिए प्रस्तुत नहीं किया। लेकिन अधिक बार, ऐसा इसलिए है क्योंकि विश्लेषक ने सबूतों को समझने में मदद करने के लिए तस्वीरें और रिपोर्ट नहीं मांगी। कुछ न्यायालयों में यह प्रशिक्षित कर्मियों की उपलब्धता का विषय है जो अपराध के दृश्यों पर प्रतिक्रिया दे सकते हैं और उचित साक्ष्य एकत्र कर सकते हैं। [13]

क्राइम सीन और उसका अध्ययन विभिन्न मामलों में बहुत महत्वपूर्ण है जैसे कि बन्दूक की चोट [14], दहेज मृत्यु [15], डूबना [16], जहर [17, 18, 19] और नशीली दवाओं के दुरुपयोग के मामले [19]।

निष्कर्षों की रिपोर्टिंग और व्याख्या

अपराध स्थल की रिपोर्ट को अक्सर अपराध स्थल के पूरक के रूप में संदर्भित किया जाता है क्योंकि यह जांच अधिकारी द्वारा पूरी की गई प्रारंभिक रिपोर्ट का पूरक है। अपराध स्थल की पूरक रिपोर्ट में इस तरह की जानकारी शामिल है:

- तारीख/समय जब तकनीशियन आते हैं
- दृश्य के रेखाचित्र/आरेख
- अपराधी का प्रवेश और निकास बिंदु (यदि यह निर्धारित किया जा सकता है)
- घटनास्थल पर मौसम की स्थिति
- अपराधी की गतिविधियों/कार्यों के बारे में सिद्धांत लिए गए फ़ोटो/वीडियो की सूची
- एकत्र किए गए सबूतों की सूची
- वाहन विवरण
- संबंधित विषयों की सूची जैसे संदिग्ध, पीड़ित, अन्य शामिल हैं
- आपातकालीन चिकित्सा कर्मियों के दस्तावेज

अपराध स्थल की जांच के बारे में भ्रांतियां

ज्यादातर लोकप्रिय टेलीविजन या इंटरनेट नाटक में, अपराध दृश्य जांच अपराध को सुलझाने के लिए एक व्यक्ति का शो है, लेकिन वास्तव में यह उनकी विशेषता के आधार पर बहु कर्मियों का दृष्टिकोण है। साक्ष्य एकत्र करने वाला व्यक्ति उनका विश्लेषण नहीं कर सकता क्योंकि यह दूसरे का काम है। डीएनए प्रोफाइलिंग विशेषज्ञ फिंगरप्रिंट विशेषज्ञ का अलग

रूप है। उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। अपराध स्थल की जांच निश्चित रूप से एक ग्लैमरस गतिविधि नहीं है, इसके विपरीत इसे अक्सर लोकप्रिय संस्कृति में कैसे चित्रित किया जाता है। जबकि टेलीविज़न पर देखी जाने वाली कुछ अपराध दृश्य तकनीकें गलत या अति-नाटकीय हैं, अपराध स्थल कर्मियों को एक दृश्य से अधिक अच्छी तरह से जांच करने, खोजने और पुनर्प्राप्त करने की अनुमति देने के लिए लगातार नए उपकरण पेश किए जा रहे हैं। वैकल्पिक प्रकाश स्रोतों के आगमन ने तकनीशियनों को जैविक साक्ष्य अधिक आसानी से खोजने में मदद की है, और 3D- लेजर स्कैनिंग तकनीक की शुरूआत ने अपराध दृश्यों को पूरी तरह और सटीक रूप से दस्तावेज करना आसान बना दिया है। लेकिन इन उन्नत उपकरणों और प्रौद्योगिकी के साथ भी, अपराध स्थल की जांच मुख्य रूप से शामिल जांचकर्ताओं और फोरेंसिक वैज्ञानिकों के कौशल और ज्ञान पर निर्भर करती है।

अपराध स्थल जांच प्रक्रिया के परिणाम

अपराध स्थल की जांच की भूमिका दृश्य का पूरा दस्तावेजीकरण और साक्ष्य का एक संग्रह देना है जिसका आगे विश्लेषण किया जा सकता है। पिछले दशक में जैसे-जैसे फोरेंसिक और प्रयोगशाला विज्ञान में सुधार हुआ है, एक दृश्य पर एकत्र किए गए ट्रेस और जैविक साक्ष्य के मूल्य में वृद्धि हुई है। डीएनए प्रोफाइलिंग के साथ, जैविक साक्ष्य की सबसे छोटी मात्रा भी किसी व्यक्ति को अपराध स्थल से जोड़ सकती है। प्रारंभिक अपराध स्थल की जांच एक लंबी प्रक्रिया की शुरुआत भर है। घटनास्थल पर एकत्र किए गए भौतिक साक्ष्य के साथ-साथ प्रत्यक्षदर्शी की गवाही भी अपराध की पूरी तस्वीर को एक साथ जोड़ने के लिए महत्वपूर्ण है।

अपराध स्थल जांच प्रक्रिया की सीमाएं

विभिन्न कारकों के माध्यम से अपराध के दृश्यों को भावनात्मक रूप से चार्ज किया जा सकता है या यहां तक कि अराजक भी हो सकता है। बाहरी अपराध दृश्यों के मामले में, मौसम की स्थिति जल्दी से सबूतों को नुकसान पहुंचा सकती है और अन्वेषक के लिए अतिरिक्त चुनौतियां पैदा कर सकती है। इसके अलावा, सिर्फ इसलिए कि डीएनए या उंगलियों के निशान घटनास्थल पर एकत्र किए जाते हैं, एक जांच अपराधी की पहचान करने में सक्षम नहीं हो सकती है यदि कोई संदिग्ध नहीं है या यह जानकारी कानून प्रवर्तन डेटाबेस में उपलब्ध किसी भी मौजूदा प्रोफाइल से मेल नहीं खाती है। कुछ साक्ष्य एकत्र करने की जांचकर्ताओं की क्षमता भी सीमित हो सकती है, यदि एक प्रकार के साक्ष्य एकत्र करके, उन्हें दूसरे से समझौता करना चाहिए। उदाहरण के लिए, खून या डीएनए के लिए हत्या के स्थान पर पीड़ित के पास पाए गए चाकू को रगड़ने से चाकू पर मौजूद गुप्त उंगलियों के निशान संभावित रूप से नष्ट हो सकते हैं।

अपराध स्थल पर गुणवत्ता नियंत्रण और गुणवत्ता आश्वासन

अपराध स्थल की जांच का प्रत्येक चरण, प्रारंभिक दृश्य सर्वेक्षण के पहले चरण से लेकर फोरेंसिक प्रयोगशाला में साक्ष्य प्रस्तुत करने के अंतिम चरण तक, एक संपूर्ण, उच्च गुणवत्ता वाली जांच सुनिश्चित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है। अपराध टेप को हटाने और दृश्य को जारी करने से पहले अंतिम गुणवत्ता आश्वासन कदम के रूप में, क्षेत्र की जांच पूरी हो गई है यह सुनिश्चित करने के लिए एक डीब्रीफिंग की जाती है। इस समीक्षा के दौरान, टीम एकत्र किए गए सबूतों, किसी भी उल्लेखनीय निष्कर्ष, प्रयोगशाला परीक्षणों की आवश्यकता हो सकती है, जिस क्रम में साक्ष्य का परीक्षण किया जाना चाहिए और किसी भी दृश्य के बाद की जिम्मेदारियों पर चर्चा करता है। एक बार जब सबूत फोरेंसिक प्रयोगशाला में जमा कर दिया जाता है, तो सुविधाओं और उपकरणों, विधियों और प्रक्रियाओं, और विश्लेषक योग्यता और प्रशिक्षण को नियंत्रित करने वाली नीतियां और प्रक्रियाएं होती हैं। जिस राज्य में यह संचालित होता है, उसके आधार पर एक अपराध

प्रयोगशाला को यह सत्यापित करने के लिए मान्यता प्राप्त करने की आवश्यकता हो सकती है कि यह गुणवत्ता मानकों को पूरा करती है।

क्राइम सीन को दूषित होने से कैसे बचाएं

- अन्य लोगों के लिए दृश्य पहुंच से बचें
- अपराध स्थल पर सख्त प्रवेश और निकास मार्ग स्थापित करें
- पहले उत्तरदाताओं की पहचान करें और उन्मूलन नमूनों के संग्रह पर विचार करें।
- कचरा और उपकरण के लिए सुरक्षित क्षेत्र नामित करें।
- कर्मियों के संदूषण को रोकने और दृश्य संदूषण को कम करने के लिए व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण (पीपीई) का उपयोग करें।
- साक्ष्य संग्रह और/या दृश्यों के बीच उपकरण/उपकरण और व्यक्तिगत सुरक्षा
- उपकरण को साफ/साफ करना या निपटाना।
- जैविक नमूनों का प्रत्यक्ष संग्रह करते समय एकल-उपयोग वाले उपकरणों का उपयोग करें

अपराध स्थल पर खोज के तरीके

मूल रूप से, पांच प्रकार की खोज विधियां: साक्ष्य खोजने के लिए ग्रिड सर्च, जोन या सेक्टर सर्च, स्ट्रिप सर्च, पाई या व्हील और स्पाइरल सर्च अपराध स्थल पर।

सर्पिल खोज विधि:

यह क्राइम सीन पर सर्चिंग ऑफिसर द्वारा अपनाई गई सर्किल तकनीक को हमेशा चौड़ा करने वाली तकनीक है जो केंद्र में केंद्र बिंदु से शुरू होती है और दक्षिणावर्त या एंटी-क्लॉकवाइज तरीके से बाहर की ओर जाती है। यह छोटे कमरे और सीमित क्षेत्र के लिए अच्छा है।

ग्रिड खोज विधि:

यह स्ट्रिप सर्च का एक प्रकार है और बाहरी अपराध जैसे बड़े अपराध स्थल क्षेत्र के लिए मुख्य रूप से उपयोगी है। इसमें समय लगता है लेकिन क्षेत्र की गहन जांच होती है।

पट्टी खोज विधि:

इसका उपयोग बड़े क्षेत्र के लिए बाहरी अपराध स्थल के लिए भी किया जाता है। इसे पुरातत्वविदों ने भी अपनाया है। यह अपराध स्थल के पार गलियों की श्रृंखला का उपयोग करके किया जाता है।

क्षेत्र या क्षेत्र खोज विधि:

इसका उपयोग तब किया जाता है जब खोज क्षेत्र बड़ा और बोझिल होता है। इस पद्धति में, अपराध स्थल को बड़े चार चतुर्थांश या सेक्टर में विभाजित किया जाता है और फिर प्रत्येक सेक्टर में स्पाइरल, स्ट्रिप या ग्रिड विधियों के माध्यम से खोज की जा सकती है।

पाई या व्हील खोज विधि:

इस प्रकार, अपराध स्थल के चारों ओर के घेरे को पाई की तरह छह भागों में विभाजित किया जाता है। दृश्य की परिस्थितियों के अनुसार प्रत्येक भाग में विधियों को अपनाया जा सकता है।

उपरोक्त सभी विधियों के माध्यम से, अन्वेषक साक्ष्य एकत्र करने का प्रयास करेगा और प्रवेश के बिंदु, घटना के बिंदु, निकास बिंदु, अपराध स्थल के माध्यम से मार्ग, भागने के मार्ग, किसी छिपे हुए स्थान की पहचान करने का प्रयास करेगा।

निष्कर्ष

पुनर्निर्माण के उद्देश्यों के लिए, अनुभवी मानव संसाधनों द्वारा अपराध के दृश्य के भौतिक साक्ष्य और उद्धरणों को अधिक महत्व नहीं दिया जा रहा है। सभी मामलों को खंगाला नहीं जा सकता है या कुछ मामलों में साक्ष्य एकत्र करने की आवश्यकता नहीं है। कई जगह अपराध के दृश्यों का जवाब देने के लिए सक्षम कर्मचारी उपलब्ध नहीं हैं। अपराध प्रयोगशालाओं में काम का बोझ इतना अधिक हो गया है कि कई प्रयोगशाला कार्यकर्ता अब अपराध के दृश्यों का जवाब नहीं देते हैं। वे अपराध पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक कौशल विकसित नहीं करते हैं। फोरेंसिक वैज्ञानिक को भौतिक सबूतों के उपयोग और अपराध के पुनर्निर्माण के अर्थ को पहचानना होगा।

संदर्भ सूची :

1. परमार पी, उधयबनु आर वॉइस फ़िंगरप्रिंटिंग - अपराध के खिलाफ एक बहुत महत्वपूर्ण उपकरण। इंडियन एकेडमी ऑफ फॉरेंसिक मेडिसिन जर्नल, 2012; 34 (1): 70 - 73।
2. परमार पी, राठौड़ जी.बी. फोरेंसिक ऑन्कोलॉजी: अपराध के खिलाफ एक आवश्यक इकाई। इंडियन एकेडमी ऑफ फॉरेंसिक मेडिसिन जर्नल, 2012; 34 (4): 355-357।
3. परमार पी, राठौड़ जी.बी. खोपड़ी टांके के अध्ययन से उम्र का निर्धारण। वर्तमान शोध और समीक्षा के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 2012; 4 (20): 127-133।
4. परमार पी, राठौड़ जी.बी. उम्र के निर्धारण के लिए अस्थायी दांतों के विस्फोट का अध्ययन। वर्तमान शोध और समीक्षा के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 2013; 5 (1): 115-119।
5. परमार पी, राठौड़ जी.बी. सामान्य आबादी में मेडिको-कानूनी शव परीक्षा के बारे में ज्ञान, दृष्टिकोण और धारणा का अध्ययन। चिकित्सा और औषधि विज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, 2013; 3 (6): 1-6।
6. ली एच, एड। अपराध स्थल जांच। ताओयुआन, ताइवान: सेंट्रल पुलिस यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994, पी। १।
7. चिसुम डब्ल्यूजे। अपराध पुनर्निर्माण के लिए एक परिचय। इन: टुरवे, बी, एड। आपराधिक रूपरेखा: व्यवहार विश्लेषण का एक परिचय। लंदन: अकादमिक प्रेस, 1999।
8. Cooley C. "क्राइम सीन रिकंस्ट्रक्शन: द फाउंडेशन ऑफ बिहेवियरल एविडेंस एनालिसिस।" http://www.law-forensic.com /behavioral_evidence_analysis.htm
9. डॉयल ए.सी. "द एडवेंचर्स ऑफ़ शेरलॉक होम्स: XI। द एडवेंचर ऑफ़ बेनील कोरोनेट। " द स्ट्रैंड मैगज़ीन, मई 1892. द ओरिजिनल इलस्ट्रेटेड शेरलॉक होम्स में पुनर्प्रकाशित। न्यू जर्सी: कैसल बुक्स, 1991, पी। 164।
10. स्कॉट डीडी, कॉनर एम। कॉन्टेक्स्ट डिलेक्टी: फॉरेंसिक वर्क में पुरातात्विक संदर्भ। में: हागलुंड डब्लूडी, सॉर्ग एमएच, एड। फोरेंसिक तपोनिमी। न्यूयॉर्क: सीआरसी प्रेस, 1997, पी। ३।।
11. ओगल जूनियर आरआर। अपराध दृश्य जांच और पुनर्निर्माण। ऊपरी सैडल नदी, एनजे: अप्रेंटिस हॉल, 2004, पीपी। 251-252।
12. थॉर्नटन जी। सामान्य मान्यताओं और फोरेंसिक पहचान का औचित्य। इन: फ्रिगमैन डी, के डी, साक्स एम और सैंडर्स जे, एड। आधुनिक वैज्ञानिक साक्ष्य: कानून और विशेषज्ञ गवाही का विज्ञान, वॉल्यूम। 2. सेंट पॉल, एमएन: वेस्ट पब्लिशिंग, 1997, पी .13।
13. रैगल एल। क्राइम सीन। न्यूयॉर्क, एनवाई: एवन बुक्स, 2002, पी। 42।
14. परमार पी, राठौड़ जी.बी. हार्ट के लिए बन्दूक की चोट के कारण मृत्यु में रक्तहीन अपराध दृश्य की व्याख्या - एक केस रिपोर्ट। इंट जे कार्डियोवस्क रेस, 2014; ३ (३)।
15. परमार पी। दहेज मृत्यु और कानून - भारतीय परिदृश्य। एकीकृत चिकित्सा के अंतर्राष्ट्रीय अभिलेखागार, 2014; 1 (2): 44-49।
16. परमार पी, राठौड़ जीबी, राठौड़ एस, पारिख ए। प्रकृति अपराध को हल करने में मदद करता है - डूबते हुए मौत के मामले में डायटम का अध्ययन। एकीकृत चिकित्सा के अंतर्राष्ट्रीय अभिलेखागार, 2014; 1 (3): 58-65।

17. परमार पी, राठौड़ जीबी, राठौड़ एस, पारिख ए। ऑर्गनोफॉस्फोरस यौगिक विषाक्तता - गांधीनगर, गुजरात में जनसांख्यिकीय प्रोफ़ाइल। जे फोरेंसिक टॉक्सिकॉल फार्माकोल, 2014; 3: 3।
18. परमार पी, राठौड़ जीबी, राठौड़ एस, पारिख ए। गांधीनगर, गुजरात में एल्युमिनियम फास्फाइड विषाक्तता की जनसांख्यिकीय प्रोफ़ाइल। आईएआईएम, 2015; 2 (1): 76-82।
19. परमार पी, राठौड़ जीबी, राठौड़ एस।, पारिख ए। नशीली दवाओं के दुरुपयोग और अवैध नशीले पदार्थों की तस्करी के दृश्य मानव जीवन - एक समीक्षा। प्रेंस मेड अर्जेंटीना, 2015; 101: 2।

अतिरिक्त प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष,
फॉरेंसिक मेडिसिन एंड टॉक्सिकोलॉजी विभाग,
अध्यक्ष, राजभाषा समिति,
अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स),
बीबीनगर, तेलंगाना, भारत

4 स्वस्थ समाज की परिकल्पना का उपन्यास : कुबेर

श्यामसुंदर पाण्डेय

मेहनत, जिसका कोई विकल्प आज भी नहीं बन पाया है और जिसे सदियों से किसी भी सफलता का मूल माना जाता रहा है । शायद मानव के आदिकाल से ही यदि कुछ शाश्वत है तो उसमें एक मेहनत भी है । आज विज्ञान जब दुनिया के कण-कण पर नज़र रखे हुए है, सबको पल-पल नियंत्रित कर रहा है तब भी मेहनत अपने उसी मूल रूप में लहलहा रही है।-[1] निश्चित ही आज विज्ञान ने दुनिया को हमारी मुट्ठी में कर दिया है, विश्वबाजार और विश्वग्राम जैसी परिकल्पनाओं ने यदि कहीं पूंजीवाद को बढावा दिया है तो पिछले कुछ दशकों से युवा पीढी को ऊँची और लम्बी उड़ान के लिए एक अनंत आकाश भी प्रदान किया है। और, जिनके पंखों में ताकत है वे उड़ रहे हैं । आज दुनिया बाहें फैलाए इन प्रतिभाओं के स्वागत के लिए खड़ी है । आज जिसे धरती के जिस कोने में काम मिल रहा है, वहां जाने में उसे कोई संकोच नहीं हो रहा है । इसी का परिणाम है कि भारत जैसे विकासशील देशों के तमाम लोगों नें भी विकसित देशों की धरती पर अपनी मेहनत और कर्तव्यनिष्ठा का लोहा मनवा लिया है । निश्चित ही इस ऊँची उड़ान में खतरे हैं- पंखों के थक जाने का, शायद कभी गिर जाने का भी डर बना ही रहता है फिर भी 'मन के जीते जीत' को आधार बना कर आगे बढ़ने की संभावनाएँ भी कम नहीं हैं । 'मैं बेचारा डूबन डरा, रहा किनारे बैठि' के भाव को छोड़ते हुए आज की युवा पीढी भावी खतरों से जूझने का मन बनाकर कर विश्व के कोने-कोने में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है । इन्हीं भावों की आधारभूमि पर प्रवासी साहित्यकारों में वर्तमान की चर्चित कथाकार हंसादीप नें अपने उपन्यास 'कुबेर' की सर्जना की है । 'कुबेर के बहाने डॉ. हंसादीप जी ने एक पूरी यात्रा का मानों संस्मरण लिख दिया है । यात्रा, जो प्रारंभ होती है बहुत निम्न स्तर से और उसके बाद धीरे-धीरे ऊपर उठती जाती है, उसके बाद फिर नीचे उतरने लगती है। जीवन के उतार-चढाव यदि नहीं हों तो कहानी और जीवन दोनों नीरस होकर रह जाते हैं । हंसादीप नें इन उतार चढावों को बहुत सूक्ष्म दृष्टि से पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।'(भूमिका) आज जब चारो तरफ भौतिकवाद का बोलबाला है, जब अर्थोपार्जन ही लोगों के जीवन का एक मात्र उद्देश्य बनता जा रहा है ऐसे में यह उपन्यास हमारे समाज के तमाम बन्धनों और व्यक्तिगत लोलुपताओं को छोड़ते हुए मानवजाति की सेवा का एक अनुकरणीय सन्देश देता है । वैसे तो जनसेवा के नाम पर भी आडम्बरों की बाढ़ आई हुई है । राजनीतिज्ञों से लेकर व्यापक संख्या में समाजसेवी संस्थाएँ जनकल्याण का झंडा लिए घूम रही हैं लेकिन उनका लाभ समाज के लिए ढाक के तीन पात ही कहे जा सकते हैं । आज जब समाजसेवा भी लूटपाट का एक बड़ा माध्यम बन चुकी और तमाम समाजसेवी जाँच के दायरे में आ चुके हैं, एन. जी. ओ. के नाम पर सैकड़ों प्रकार की जो लूटपाट आज मची हुई है ऐसे कार्यों में संलिप्त आडम्बरी लोगों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है यह उपन्यास । जिस प्रकार की सेवा भावना इस उपन्यास के पात्रों में दिखाई देती है उनके माध्यम से यह उपन्यास 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना को बल प्रदान करता है ।

उपन्यास के कथानक का प्रारंभ एक सुविधाविहीन गाँव से होता है जहां लोगों को अपने जीवन यापन के लिए तरह-तरह के उद्यम करने पड़ते हैं ।-[2] इसी गाँव के एक गरीब परिवार से निकला धन्नू – धनञ्जय प्रसाद -डी.पी. और अंत में कुबेर की जो यात्रा इस उपन्यास का नायक पूरी करता है, वह यात्रा इस बात की संकेतक है कि किसी भी व्यक्ति के जीवन की सफलता के पीछे उसकी मेहनत और ईमानदारी की बहुत बड़ी भूमिका होती है, उपन्यास

का कथानक इस बात का संकेतक है कि इमानदारी की आधारभूमि पर खड़ा व्यक्ति जीवन के तमाम झंझावातों के बीच भी अपने उद्देश्यों को पूरा करने में सफल होता है । लेखिका द्वारा धन्नू के बचपन से सम्बन्धित ग्राम्य समाज का यथार्थ चित्रण किया गया है । इन अभावों के बीच भी लोग अपने बच्चों को यथासंभव सुविधायें प्रदान कराते हुए शिक्षोपार्जन के लिए भेज रहे हैं । ऐसे ही एक परिवार में बेटे धन्नू द्वारा कॉपी -पेन्सिल के लिए पैसे माँगने पर उसकी माँ द्वारा कहा गया वाक्य 'कुबेर का खजाना नहीं है मेरे पास जो हर वक्त पैसे मांगते रहते हो' बाद में उसके लिए सूत्र वाक्य बन जाता है। वह घर से निकलता तो है उसी कुबेर के खजाने की तलाश में लेकिन आगे चलकर जनसेवा उसके जीवन का उद्देश्य बन जाता है और वही उसके लिए कुबेर का खजाना भी हो जाता है । उपन्यास के प्रारंभ में लेखिका द्वारा धन्नू की तंगहाली की जिन परिस्थितयों का चित्रण किया गया है उनमे ग्रामीण जीवन की गरीबी से भिड़ते एक परिवार का वास्तविक चित्र उभर कर हमारे सामने आता है, जो वर्तमान के ग्रामीण जीवन की वास्तविकता से हमारा परिचय कराता है । दूसरी तरफ, बच्चों की शिक्षा से सम्बन्धित एक बड़ी समस्या भी यहाँ उठाई गई है। सामान्य रूप से पारंपरिक पद्धति पर आधारित हमारी शिक्षा व्यवस्था में सभी बच्चों को एक ही डंडे से हांका जाता है । अपनी कक्षा के बच्चों से बहुत आगे है धन्नू की सोच, इसलिए अध्यापिका द्वारा जो बातें पढाई जाती हैं उनसे वह पहले से ही अवगत होता है। वह जब अध्यापिका के सभी प्रश्नों के उत्तर धडाधड देता है तो अध्यापिका खुश होने की जगह क्रोधित होती हैं। बच्चों को अधिक से अधिक गृहकार्य देकर समय बिताती हैं और धन्नू को यह व्यर्थ की चीज लगती है। 'जो बातें याद हैं उन्हें लिख कर क्या लाभ'। ऐसे में तीव्र बुद्धिवाले धन्नू को अपनी अध्यापिका से बार-बार अपमानित होना पड़ता है। 'तुमने गृह कार्य किया ? हाँ, सब याद कर लिया ।' लेकिन अध्यापिका के लिए 'याद कर लिया' और 'मैं सब बता सकता हूँ' जैसी बातों से कोई मतलब नहीं है, यहाँ तो काम करना मतलब कॉपी पर लिखना होता है, विद्यार्थी को सब कुछ याद हो न हो, इससे कुछ लेना-देना नहीं । निश्चित ही यह एक ऐसी समस्या है जिस पर हम सामान्य लोग बिलकुल ध्यान नहीं देते हैं। धन्नू की उधेड़-बुन और उसके विचारों की टकराहट के माध्यम से यहाँ बाल मनोविज्ञान का बड़ा ही मार्मिक चित्रण लेखिका ने किया है।[-2]

इसी क्रम में लेखिका द्वारा हमारे राजनेताओं द्वारा चुनाव के समय की जाने वाली घोषणाओं, जनता को दिए जाने वाले लालच और बाद में सबसे मुकर जाने वाले यथार्थ की तरफ भी लेखिका का ध्यान गया है । सामान्यतः हमारे राजनेता चुनाव के समय बड़ी-बड़ी घोषणाएं तो कर देते हैं लेकिन चुनाव जीतने के बाद साढ़े चार वर्ष दिखाई ही नहीं देते । बहुत बार तो यही होता है कि वे अपने वादे को पूरे नहीं करते लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक नेताजी यदि कोई अच्छा कार्य भी प्रारंभ करते हैं और किसी कारण से यदि अगली बार सरकार बदल जाती है तो उस अच्छे कार्य पर भी विराम लग जाता है । हर सरकार द्वारा बनाई योजना को हमारे राजनीतिज्ञ वोटबैंक के एक साधन के रूप में देखते हैं । उपन्यास का नायक बालक धन्नू राजनीतिज्ञों की इसी नीति का शिकार बना जाता है । उसकी कुशाग्रता देखकर एक नेता जी अपने खर्च पर उसके आगे की पढाई की बात कहते हैं , जिसके बल पर उसका नामांकन एक अंग्रेजी विद्यालय में तो कराया जाता है लेकिन अगले चुनाव में जब वह नेता जी चुनाव हार जाते हैं तो उसे मिलने वाली सुविधा बंद हो जाती है और उसकी पढाई संकट में पड़ जाती है । बार-बार अपनी अध्यापिका द्वारा किये जाने वाले अपमान और समस्या को समझे बिना अपने पिता से प्राप्त प्रताड़ना से उस बालक का कोमल मन टूट जाता है। माता-पिता की आर्थिक परेशानियों को देखता हुआ वह बालक 'कुबेर' बनने का सपना लेकर निकल जाता है । यहाँ भी लेखिका ने बालमनोविज्ञान का सुन्दर अंकन किया है । माता - पिता की परेशानियों को समझते हुए धन्नू समय से पहले ही जितनी समझदारी दिखाता है, वह कुछ-कुछ प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' के हामिद की याद दिला जाती है तो आगे चलकर अपनी ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा के कारण जो आदर्श वह प्रस्तुत करता है उसमें प्रेमचंद की ही 'परीक्षा' के जानकीनाथ की

झलक मिलती है।[4] घर से निकलने के बाद उसके सपनो को पंख मिल जाते हैं । गुप्ता जी के ढाबे पर अपनी मेहनत से सबका दिल मोह लेना, अपने साथियों के साथ धन्नू की मिलनसारिता आदि सभी बातें पाठक को बार-बार आकर्षित करती हैं । लेखिका ने उपन्यास के नायक की प्रारंभ में जितना आदर्शवादी दिखाया है वह अंत तक उसी रूप में बना रहता है । वह समाज के अन्य लोगों से अलग जनसेवा की अपनी एक राह निर्मित करता है जिसमें बार-बार उसकी ईमानदारी और मेहनत उसकी सफलता का कारण बनती हैं ।

जीवन ज्योति जैसे समाजसेवी संस्था में जाने के बाद भी उसके वही सद्‌गुण काम करते हैं और वहाँ भी बहुत जल्दी वह सबका चहेता बनकर 'दादा' के उत्तराधिकारी के रूप में उभरने लगता है । लेखिका यहाँ यह स्पष्ट कर देती हैं कि हमारे समाज में जनसेवा युगों-युगों से श्रेष्ठ कर्म माना जाती रही है और हर समय में लोगों की पसंद रही है । जिस समाज में 'परहित धरम सरिस नहिं भाई' को जीवन का केंद्र माना गया हो वहां आज भी अनेक संस्थायें और व्यक्ति समाजसेवा में अपना परम कर्तव्य समझकर लगे हुए हैं। यहाँ जीवन ज्योति जैसी समाजसेवी संस्थाओं की निःस्वार्थ भावना स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।- [5] देश की आज़ादी के बाद कुछ स्थितियां ऐसी ऐसी भी उत्पन्न हुईं जब समाज सेवा के नाम पर पर विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं ने भ्रष्टाचार का निंदनीय काम भी किया । इसका परिणाम यह हुआ कि समाज का एक बड़ा वर्ग ऐसे कार्यों के विरोध को अपने धर्मरक्षा के कार्य से जोड़ कर देखने लगा और इसका परिणाम जीवन ज्योति जैसी ईमानदारी से काम कर रही संस्थाओं को भी भुगतान पड़ा । लेखिका ने समाज के इस पक्ष को बड़ी यथार्थ के साथ उठाया है जहाँ समाज के कुछ लोग धर्म के नाम पर जीवन ज्योति के विरुद्ध प्रचार का भी कार्य करते हैं ।

इस उपन्यास की एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यहाँ खलनायकी के लिए कोई अवकाश नहीं है । उपन्यास के लगभग सभी पात्र आदर्शवादिता के घेरे में ही चलते दिखाई देते हैं । नायक का नैन्सी से प्रेम भी अपनी मर्यादाओं का कहीं उल्लंघन नहीं करता है । यद्यपि कि उसके जीवन में दाम्पत्य सुख लम्बे समय तक नहीं टिकता, पत्नी की मृत्यु पर वह टूटता अवश्य है लेकिन बहुत जल्दी स्वयं को संभाल भी लेता है और पूरी शक्ति के साथ अपने जीवन के मूल उद्देश्य समाजसेवा में लग जाता है । धन्नू के माता-पिता और नैन्सी की मृत्यु जैसी कुछ घटनाएं मुख्य पात्र के प्रति सहानुभूति अवश्य प्रकट करती हैं अन्यथा पूरे उपन्यास पर उसका आदर्श चरित्र ही छाया रहता है। उपन्यास का नायक बचपन से लेकर अंत तक एक संवेदनशील व्यक्ति के रूप में दिखाई देता है । ढाबे पर नौकरी करके कुछ पैसे एकत्र जब वह घर लौटता है और वहां पहुँचने पर जब उसे अपने माता-पिता की मृत्यु का समाचार मिलता है तो बहुत दुखी होता है । लेखिका ने यहाँ भी बाल मनोविज्ञान का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है । गाँव की गलियों में माँ को ढूंढता एक अकेला बालक, लिपि-पुती दीवारों पर माँ की अँगुलियों के निशान ढूंढता एक अकेला बालक पाठकों के मन को द्रवित कर देता है ।

उपन्यास का एक बड़ा पक्ष जीवन ज्योति द्वारा किये जा रहे समाज सेवा पर केन्द्रित है । दीवारों पर जीवन ज्योति के सदस्यों और जरूरतमंदों के बीच मानवी प्रेम तथा उनके सहज सम्बन्धों को चित्रित करते हए लेखिका द्वारा जिस परिवेश की निर्मिति की गई है वह भी एक आदर्श उदाहरण है। लेखिका ऐसे कार्यों के प्रति पूरे उपन्यास में जागरूक दिखाई देती हैं । उपन्यास में जीवन ज्योति के संचालक दादा का मरना, उनके अनुयायियों का दुःख, धन्नू का डी. पी. सर बन जाना, मैरी का विवाह, नैन्सी के चाचा का जीवन ज्योति से जुड़ जाना और धन्नू द्वारा लोगों की सेवा के लिए विदेशों से धन एकत्र करने आदि की घटनाएं इतनी सहजता से आगे बढ़ती जाती हैं कि लम्बे समय तक एक ही भाव बना रह जाता है, हर जगह- सेवा भाव ही प्रधान है। मानवसेवा का प्रण लिए हुए इस उपन्यास के पात्र धरती के कोने-कोने में जाते हैं, अनेक संकटों से भी जूझते हैं लेकिन उनके संकल्प कहीं डिगते नहीं हैं। न्यूयार्क से लेकर कनाडा की भूमि तक फैला डी. पी. का व्यवसाय, उसमें आने वाले उतार-चढाव, रियल स्टेट के घाटे–मुनाफे, टैक्सी चलाना, शेयर मार्केट से लेकर वेगस के केसिनों तक

के लोगों के व्यवहार, उनकी सोच एवं उनके संस्कारों आदि का चित्रण करते हुए वहाँ का सम्पूर्ण परिवेश रूपायित हो उठता है । उपन्यास के नायक के जीवन में उतार-चढ़ाव तो अनेक आते हैं लेकिन वह कभी विपरीत परिस्थितियों से पलायन करता नहीं दिखाई देता । संकटों से जूझना उसकी नियति है और, उपन्यास का यह पक्ष पाठकों को विशेष आकर्षित करता है । एक तरह से यह उपन्यास 'जहाँ चाह, वहाँ राह' का सन्देश देता दिखाई देता है ।

यद्यपि कि लेखिका नें इस परिवेश चित्रण में अधिक समय दिया है लेकिन इन महानगरों की जीवन शैली, आर्थिक सामर्थ्य के अनुसार लोगों के जीवन स्तर में होते बदलाव आदि से गुजरते हुए हम उस संस्कृति से अच्छी तरह परिचित हो जाते हैं । समय और अपनी आमदनी के साथ अपने जीवन की आवश्यकताओं को बिना किसी पश्चात्ताप के घटाते – बढाते रहने वाली जीवन शैली हमारे मन में एक उत्सुकता तो उत्पन्न करती ही है, परिस्थितियों से सहज समझौते का एक सन्देश भी देती है । इसके साथ ही कनाडा व अमेरिका की सीमा पर छाई शांति का चित्रण करते हुए हंसादीप भारत-पाकिस्तान सीमा के बाघा बार्डर की शाम को याद करना नहीं भूलती हैं जहाँ एक दूसरे के प्रति चुनौतीपूर्ण उद्घोष में लोग अपनी ऊर्जा निरर्थक खर्च करते हैं । कनाडा-अमेरिका सीमा के सम्बन्ध में वह लिखती हैं 'बगैर सैनिकों के दो देशों की सीमा रेखाएं बहुत कुछ कहती हैं, बहुत कुछ सिखाती हैं । मानवता के पाठ, शान्ति के पाठ, नागरिकों की आपसी समझदारी और विश्वास के पाठ और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण दोनों देशों की सरकारों के कामकाज की शैली के पाठ जिससे करोड़ों के अनावश्यक खर्च बचत होती जो सीमा पर्, सुरक्षा बालों पर, शस्त्रों पर खर्च होता। काश! दुनिया का हर देश अपनी सीमा को ऐसी सीमा बना दे, निर्बाध और निःशक्य, आपसी प्यार और भरोसे के बीजों को बोते हुए ।'

सच्चाई तो यह है कि मानवता, निःस्वार्थ समाजसेवा, शान्ति और स्वस्थ मानवीय विचारधारा के इन्हीं बीजों को चतुर्दिक विकीर्ण करने की एक स्वस्थ विचारधारा की परिणति है यह उपन्यास । उसी की तलाश करती हुई लेखिका अपनी कथावस्तु के साथ भारत-अमेरिका और कनाडा तक की यात्रा कर आती हैं । आज हम समाज सेवा के तमाम आडम्बरी रूप या कहें कि ढकोसले आये दिन देखते हैं, तथाकथित समाजसेवियों द्वारा जरूरतमंदों की सेवा भावना और मीडिया के माध्यम से प्रचार की गतिविधियों से भी हम अच्छी तरह अवगत हैं लेकिन जीवनज्योति के माध्यम से जिस मानव निर्माण की कल्पना लेखिका द्वारा इस उपन्यास में की गयी है वह सर्वथा सराहनीय है । निश्चित ही आज की सामाजिक समस्याओं से यदि निजात पाना है तो सर्वप्रथम हमें हर तरह से स्वस्थ नागरिक तैयार करने होंगें और सबको मिलकर एक मानव श्रृंखला तैयार करनी होगी वरना –'एक अकेला थक जाएगा' वाली बात ही रह जायेगी । लेखिका कथानक के मध्य अपने उदाहरणों से बार-बार यह संकेत करती रहती हैं कि हमारी छोटी सी मदद भी तमाम लोगों के जीवन में खुशियों का आधार बन सकती है । बाढ़ में अपना सर्वस्व गँवा चुके ग्यारह बच्चों को कुबेर द्वारा जिस प्रकार शिक्षित बनाकर अपने रोजगार से जोड़ दिया जाता है और सभी जीवन ज्योति की मदद करना अपना कर्तव्य समझ कर मदद करते हैं, यह नूतन समाज निर्माण का एक आदर्श उदाहरण है । मुझे लगता है यह उपन्यास ऐसे ही एक स्वस्थ समाज के निर्माण की लेखिका की एक स्वस्थ परिकल्पना है । धन्नू से डी. पी. और कुबेर तक की यात्रा करने वाला इस उपन्यास का मुख्य पात्र मैनहटन की गगनचुम्बी इमारतों और वेगस के केसिनों में पहुँच कर भी अपने गाँव को याद करता है । वह बदलना चाहता भारत के उन गाँवों को जहाँ असली भारत आज भी बसता है । धन्नू का यह देश प्रेम उन युवकों के लिए एक आदर्श बन कर उभरता है जो विदेशों की भौतिक चकाचौंध में अपनी मातृभूमि को भुला कर ही अपना जीवन सार्थक बनाने में लगे रहते हैं । विदेशी धरती पर पैर रखते ही उन्हें सिर्फ और सिर्फ भारत की खामियाँ नज़र आती हैं और वे वहीं बस कर अपना जीवन बिता लेना चाहते हैं ।

कुबेर बन कर भी धन्नू को अपने माता-पिता की और अपने बचपन के गरीबी की याद आती रहती है ।

विकास की ऊँचाइयों पर पहुँच कर भी अपनी जड़ों को न भूलना इस उपन्यास के मूल सिद्धांत समाजसेवा और नये समाज के निर्माण की विचारधारा का ही एक अंग है । उपन्यास के उत्तरार्ध में सत्यवती देवी और उनके परिवार के माध्यम से लेखिका नें भारतीय राजनीति के छिछलेपन को अभिव्यक्त किया है । जिस प्रकार के आरोप-प्रत्यारोपों और जी-हुजूरी एवं चाटुकारिता के दौर से भारतीय राजनीति आज गुजर रही है वह सत्यवती देवी के परिवार जैसे अनेकानेक परिवारों की दुखद कहानी का मूल कारण है । इस उपन्यास में लेखिका राजनीतिज्ञों के ऐसे अनेकानेक आडम्बरों को बेनकाब करती हैं जहाँ हमारे राजनीतिज्ञ अपने जीवन की एक-एक साँस समाज के लिए ही बिताने का ढोंग करते हैं लेकिन उनके विचार भ्रष्टाचार की आधारभूमि पर खड़े महल की तरह ही होते हैं ।

उपन्यास का अंत भी समाज सुधार के लिए बनी एक नई योजना के साथ होता है 'एक नया कार्यक्रम बना जिसके तहत हर वह बच्चा जिसके माता-पिता का साया उठ चुका था और हर वह बच्चा जो स्पेशल चाइल्ड था, उसे अपनी शरण में लेने का । उन बच्चों को हर तरह की सुविधायें दी जाती थीं आत्मनिर्भर बनाने के लिए । जिसे जो करना है करे पर अपनी लगन से करे । --- उसके विकास के लिए अतिरिक्त सुविधायें दी जातीं और उसे अपने पैरों पर खड़ा करने के अथक प्रयास किये जाते ।' कमजोरों को अपने पैरों पर खड़ा करने का यही प्रयास इस उपन्यास में लेखिका का मंतव्य है । इस रूप में रचनाकार एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहती हैं जिसके सभी नागरिक हर तरह से संपन्न हों ।

यद्यपि कि कुबेर और उसके आदर्श दादा अपने जीवन में जिस मार्ग का अनुसरण करते हैं वह मार्ग मानवीय न होकर एक दैवीय मार्ग कहा जा सकता है । व्यावहारिक जीवन में जिस पर चलने की कल्पना मात्र ही की जा सकती है । संसार के आकर्षणों से दूर रहते हुए अपने कर्तव्य पथ पर चलने का जो आदर्श यहाँ प्रस्तुत किया गया है वह सामान्य पथ नहीं कहा जा सकता है । मन की भटकन और आकर्षण सामान्य रूप से मानव जीवन के अंग कहे जा सकते हैं । भौतिकता की इस चकाचौंध से डी.पी. और दादा दोनों का बिलकुल परे रहना लेखिका की आदर्शवादी दृष्टि का परिचय देते हैं । यद्यपि कि, कोई भी कथा जिस परिवेश से गुजरती है उससे उसके पात्रों का रंच मात्र भी प्रभावित न होना बार-बार पाठक के मन में एक संदेह उत्पन्न करता है । कई स्थानों पर ऐसा भी लगता है कि लेखिका द्वारा परिवेश चित्रण के लोभ में या तो कथा कुछ लम्बी हो गयी है या उस समाज के कुछ जीवंत पक्ष अछूते रह गए हैं ।

फिर भी उपन्यास के कथानक में कहीं बिखराव नहीं आया है । कथा एक सीधी राह में निरंतर ऊँचाइयों की तरफ बढ़ती है और पाठक लगातार कुछ और अच्छा, कुछ और अच्छे की तलाश में अंत तक उत्सुक बना रहता है । पात्रों की संख्या अधिक होकर भी कथानक को सहज बनाये रखना हंसादीप की अपनी पहचान है [1-6] इस सम्बन्ध में कहीं अंततः यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि कुबेर उपन्यास हंसादीप द्वारा किये गए एक ऐसे समाज की परिकल्पना की परिणति है जिसमें हर तरह से स्वस्थ नागरिकों के निर्माण की परिकल्पना है । यह उस आदर्श मानव श्रृंखला की परिकल्पना है जो 'साथी हाथ बढ़ाना' की भावभूमि पर खडी होती है । जनसेवा में ही अपने सुखों की तलाश करता यह उपन्यास लेखिका के व्यक्तित्त्व का परिचायक भी कहा जा सकता है ।

कथावस्तु की तरह ही उपन्यास के भाषा की सहजता भी उपन्यास की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता कही जा सकती है । देश-काल-वातावरण और पात्रों के अनुकूल समाज में प्रचलित अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग और कहीं-कहीं लोकप्रचलित मुहावरे इस उपन्यास को पठनीय बनाते हैं । हंसा जी कनाडा की धरती पर हिन्दी की सेवा करते हुए भी अपनी रचनाओं के माध्यम से हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि करने में निरंतर सन्नद्ध हैं । आशा है, भविष्य में इस प्रकार की उनकी अन्य नई रचनायें भी हमें पढने को मिलती रहेंगी । इस अच्छे उपन्यास के लिए उन्हें शुभकामनायें ।।

सन्दर्भ सूची :

1. 'कभी काम को छोटा समझ कर मत करना । कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता, ना ही किसी काम को करने से कोई आदमी छोटा होता है, ना ही उसकी इज्जत कम होती है बल्कि वह एक उदाहरण पेश करता है दुनिया के सामने अपनी मेहनत का, अपनी खुद्दारीका।' डॉ. हंसादीप 'कुबेर' उपन्यास, पृष्ठ–210, शिवना प्रकाशन, सीहोर, (म.प्र.), वर्ष- 2019
2. 'उसे तो कॉपी और पेन्सिल के लिए कुछ पैसे चाहिए थे । जानता है कि माँ के पास कुछ है नहीं, घर में राशन भी नहीं है । इसी लिए नाराज़ होकर कह रही है । माँ की फटकार को सुनना और चुप रहना इसके अलावा कोई चारा भी तो नहीं था । बालक धन्नू समझ नहीं पाया कि दस-बीस रूपयों में यह खजाना कैसे आ जाता है बीच में, यह खजाना कहाँ है और क्या इसमें पैसे ही पैसे हैं, कभी ख़त्म न होने वाले । अगर यह सच है तो 'माँ के लिए एक दिन यह खजाना हासिल करके रहूँगा मैं ।' वही, पृष्ठ –11
3. 'बहुत ही ढीठ हो गए हो तुम, ऐसे नहीं सुधरोगे । एक ही जवाब पाकर परेशान हो गई थीं वे, सुनता ही नहीं था वह लड़का । सारी कोशिश असफल रहती तो बहन जी की छड़ी भी उठने लगती । धन्नू के हाथ की नरम लकीरों पर एक के बाद एक तड़ातड़ मार पड़ती तो दर्द होता ।' वही, पृष्ठ - 12
4. सबसे पहले तो जितना कहा जाता उससे कहीं अधिक काम करके सोता । -- ढाबे पर से पहले ही उठ जाता । काम सीखने की ऐसी ललक थी कि किसी भी काम को करने में आलस नहीं आता । एक साथ कई मोर्चों पर काम संभालता । पृष्ठ- 25, 'मालिक के ढाबे में ही नहीं दिल में भी घर करता गया ।' पृष्ठ - 29
5. दूर तक उनकी संस्था जीवन ज्योति एक ऐसे एन जी ओ के रूप में जानी जाती थी जिसके दरवाज़े हर जरूरतमंद के लिए खुले थे । पृष्ठ- 88
6. हंसा जी ने सारे पात्रों को इतने अलग-अलग विन्याश के साथ गढ़ा है कि वह ऊन की तरह एक दूसरे से उलझते नहीं बल्कि रेशम की तरह एक दूसरे की सतह को छोटे हुए फिसलते रहते हैं । और, इस फिसलन को ही थाम कर पाठक भी कहानी के साथ बहता जाता है । --- यह जो बहना है यह ही इस उपन्यास की सबसे बड़ी सफलता है । (पंकज सुबीर) इसी उपन्यास की भूमिका से ।

असोसिएट प्रोफ़ेसर,
हिन्दी विभाग,
बी.के.बिडला महाविद्यालय, कल्याण,
महाराष्ट्र

5 भारतीय ज्ञान परम्परा की धरोहर : गुरु जांभोजी की सबदवाणी में पर्यावरण-चिंतन

डॉ. मिलन बिश्नोई

भारतीय संस्कृति में ज्ञान, परम्परा और आध्यात्म की शिक्षा सदैव गौरवान्वित करने वाली रही हैं। किंतु समय के साथ बाहरी शक्तियों ने सभ्यता और संस्कृति को मिटाने का प्रयास निरन्तर किया हैं। इस घोर अंधकारमय समय में भी भारतीय ऋषि-मुनियों, संत-महात्माओं और समाज सुधारकों ने समय के अनुरूप जनता को संभालने का सराहनीय काम किया हैं। वर्तमान में भारतीय परम्परा और संस्कृति की धरोहर को बचाएं रखने के लिए कई प्रकार के व्यावधानों से जूझ रहे हैं।

किंतु आजादी के अमृत महोत्सव में भारतीय संस्कृति का पुररुत्थान करने का प्रयास किया जा रहा है, जो सराहनीय है। आज भाषा, संस्कृति, धर्म-आध्यात्मिक के तत्त्व-चिंतन को लेकर अनेकानेक बहस हो रही है। किंतु पाश्चात्य संस्कृति के परमपोषकों को भारतीय ज्ञान-परम्परा से ज्ञानार्जन करने की आवश्यकता है। खासकर कोविड-19 ने सबको सबक सिखाया भी था। भारतीय संस्कृति ने सदैव आंतरिक यात्रा (आंतरिक तत्त्व खोज) को महत्त्व दिया है। जितने भी महापुरुष हुए हैं जैसे- राम, कृष्ण, बुद्ध, गुरु जांभोजी, नानक, कबीर, रैदास, दादूदयाल, सुंदरदास, जसनाथ, रामदेव, हड़बूजी, पाबूजी, वीर तेजाजी इत्यादि , इन सभी महापुरुषों ने अपने 'स्व' को पहचानते हुए आगे बढ़ने का प्रयास किया हैं। यह सर्वविदित है हमारे महापुरुषों और संतों ने भारतीय परम्परा के माध्यम मानव और प्रकृति सहज संबंध बनाएं रखने में विश्वास बढ़ाया हैं।

साहित्यकार डॉ. आनंद पाटिल परदेशीय संस्कृति की और पलायन करने वालों को देखकर चिंता व्यक्त करते हुए लिखा है कि "अतः एक प्रश्न बारंबार मन-मस्तिष्क में आता है कि ऐसी गुलामी मानसिकता वाले लोग-बाग अपनी धरोहर के संबंध में भला क्या (कुछ!) सोचेंगे ? इस मामले में बिश्नोई समाज (संप्रदाय) ने इस नवऔपनिवेशिक समय में गुरु जांभोजी एवं उनके तत्त्व-चिंतन पर पुनः मनन-चिंतन करने का जो उपक्रम आरंभ किया है, वह सैद्धांतिक भटकाव और मुठभेड़ वाले इस समय में वांछित भी है और अनिवार्य भी! यह प्रयास अपनी धरोहर की ओर लौटने का यथेष्ट उपक्रम भी है और परदेशीय चिंतन से पल्ला छुड़ाने और अपने विचारों को आगे बढ़ाते हुए वैचारिक दृष्टि से स्वतंत्र और सुदृढ़ होने की अदम्य चाह का अप्रतीम उदाहरण भी।"[1] अर्थात् एक तरफ हम भारतीयता की बात करते हैं किंतु हम स्वयं आने वाली पीढ़ी तक हमारे रीति-रिवाज, तत्त्व-चिंतन और संस्कृति पहुँचाने में अक्षम है। किंतु गुरु जम्भेश्वर के अनुयायी आज विश्व स्तर पर अपनी संस्कृति और गुरुजी की 'सबदवाणी' को प्रसारित करने का अथक प्रयास कर रहे हैं।

"यद्यपि आचार्य शुक्ल ने यह कथन कबीर (1398-1518) और (1469-1539) के आविर्भाव की चर्चा करते हुए किया है किंतु तत्त्व-चिंतन की समानता को यदि एक क्षण के लिए ध्यान में न भी लिया जाए तो जन्म और जीवनावधि की दृष्टि से विचार करने से ज्ञात होता है कि गुरु जांभोजी (1451-1536) कबीर और नानक के समकालीन हुए हैं। अतः जो कथन कबीर-नानक पर लागू होता है, वही जाम्भोजी पर यथावत लागू होता है। किंतु साहित्येतिहास ग्रंथकारों ने जाम्भोजी के रचना और कर्म का संज्ञान नहीं लिया। बहरहाल, स्मरणीय है कि कबीर निर्गुण भक्ति के संवाहक थे तो नानक (कबीर से मिलने से पूर्व) की प्रवृत्ति एक भक्त की थी और जाम्भोजी सगुणोन्मुख निर्गुण भक्ति के संवर्धक थे।"[2] हिंदी साहित्य इतिहास में भक्तिकाल में भारतीय संत-परम्परा बखूबी से वर्णन किया है। भक्तिकाल में रामचंद्र शुक्ल ने निर्गुण काव्य परम्परा में कबीर, गुरु नानक, रैदास, दादूदयाल और सुंदरदास का उल्लेख किया हैं, किंतु खेद का विषय है कि उनकी दृष्टि उत्तर भारत की संत परम्परा में महान पर्यावरणविद्, समाजसुधारक और नारी हितैषी गुरु जांभोजी तक नहीं पहुंची। जबकि डॉ. नगेन्द्र और परशुराम चतुर्वेदी ने गुरु जांभोजी के बारे में विस्तारपूर्वक बताया हैं।

रामचन्द्र शुक्ल जी का कथन हैं कि 'साहित्य समाज का दर्पण होता है ।' जबकि वे अपने इतिहास में कबीर की सबदवाणी का जिक्र करते हैं लेकिन गुरु जांभोजी की सबदवाणी और उनके जीवन उच्चादर्श को बताना भूल जाते हैं... गुरु जांभोजी का जन्म उस समय हुआ जब देश भयानक राजनीति, रूढ़िवादी, अंधकार, पाखंड और अत्याचार से जूझ रहा था । किंतु उनके व्यक्तित्व और शिक्षा से प्रभावित होकर दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी, नागौर का नवाब मुहम्मद खान नागौरी, मेड़ता के राव दूदा, जैसलमेर के राव जैतसी, जोधपुर के राठौड़ राव सातल देव, मेवाड़ के राणा सांगा उनकी शरण में आये थे।

गुरु जांभोजी का जीवन परिचय

गुरु जांभोजी का जन्म 1451 ई.में राजस्थान के जोधपुर के निकट नागौर परगने के पीपासर ग्राम में हुआ। उनकी माता का नाम हंसा और पिता लोहटजी राजपूत थे। जनश्रुति के अनुसार कई वर्ष तक इन्होंने एक भी शब्द उच्चरित नहीं किया और चमत्कारिक प्रर्दशन के कारण जनता ने इन्हें 'जम्भंजी' कहना प्रारंभ किया । गुरुजी के अनेक नाम सामने आए हैं-"जम्भनाथ, जम्भे, जम्भै, जम्भेश्वर, जम्भैस्वराय, जम्भैजी, जांभराज, जाम्भेश्वर, जाम्भोविसन, भांभ, भांभैसर, भांभाजी, झांभराज इत्यादि।" गुरु जी के केवल इतने नाम ही नहीं बल्कि सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक सुधार संबंधित अनेक पुरुषार्थ देखने को मिलते हैं। उन्होंने 29 नियमों का निर्धारित करते हुए 'बिश्नोई' पंथ की स्थापना 1542 ई. में कार्तिक बदी अष्टमी को 'समराथल' के ऊँचे मरूभूमि के टीले पर की थी । आज भी बिश्नोई समाज के लोग इसे अपना 'पवित्र तीर्थ स्थल' मानते हैं तथा इसे 'मुक्ति धाम' और 'धोक धोरे' के नाम से जाना जाता है। 'बिश्नोई' का अर्थ 20+9 है। इस शब्द की उत्पति 'वैष्णवी' शब्द से हुई है जिसका अर्थ विष्णु के अनुयायी होता है। ये लोग अपने गुरुजी को भगवान विष्णु का अवतार मानते हैं। गुरुजी का मूलमंत्र – 'विष्णु-विष्णु भण रे प्राणी'।[3] गुरु जी के अनुयायी आज भी इनकी पूजा अपने आराध्य की भाँति करते हैं। और उनके द्वारा बताये गए नियमों का पालन दैनिक दिनचर्या में करते हैं।

गुरु जांभोजी के 29 नियमों के बारें में भारत के उपराष्ट्रपति माननीय जगदीश धनकड़ ने बताया हैं कि- "गुरु जम्भेश्वर जी द्वारा रचित शब्द वाणी तथा बिश्नोई समाज के 29 धर्म नियमों को भारतीय सांस्कृतिक विरासत का निचोड़ बताया और कहा कि इनके अनुपालन से जीवनशैली और समाज सदैव सही रास्ते पर रहेंगे।"[4] अतः गुरु जांभोजी द्वारा निर्धारित 29 नियम सरल-सहज और स्वस्थ जीवन यापन करने के लिए बनाए गए हैं- 1. तीस दिन सूतक 2. पांच दिन ऋतुवंती 3. सेरा करो स्नान 4.शील का पालन करें 5. संतोष धारण करें 6. बाहरी व आंतरिक पवित्रता रखें 7. प्रातः-सांय संध्या वंदना करें 8. संध्या को आरती और हरिगुण गान करें 9. प्रेमपूर्वक हवन करें 10.पानी, वाणी ईधन व दूध को छानकर प्रयोग करें 12. चोरी न करें 13. निंदा न करें 14. झूठ न बोलों 15 . वाद-विवाद न करें 16. अमावस्या का व्रत रखें 17. विष्णु का जप करें 18. हरा वृक्ष न काटें 20. काम, क्रोध,मद व लोभ, मोह से दूर रहें 21. हरा वृक्ष नहीं काटना 22. रसोई अपने हाथ से करनी 23. थाट अमर रखना 24. बैल का बधियाकरण नहीं करना 25. अमल-तम्बाकू का निषेध 26. मद्यपान का निषेध 28. मांस नहीं खाना 29. नील वस्त्र का त्याग

इन उनत्तीस नियमों का अत्यधिक महत्त्व बिश्नोई समाज के लिए आज भी हैं । 500 साल बाद भी गुरु जांभोजी के अनुयायी निस्वार्थ भाव से पर्यावरण और वन्यजीव संरक्षण के लिए प्राण न्यौछावर कर रहे हैं । क्योंकि गुरुजी के द्वारा बतायी गई इस आचार संहिता में सर्वप्रथम महिलाओं के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए प्रथम दो नियम उनके लिए बनाएं गए । वर्तमान केन्द्र सरकार और राज्य सरकार महिलाओं के महावारी में होने वाली समस्या और सामाजिक जागरूकता के लिए अभियान चला रही है किंतु गुरुदेव ने 15 वीं शताब्दी में महिलाओं के स्वास्थ्य की चिंता व्यक्त करते हुए कहा 'पांच दिन ऋतुवंती न्यारो' अर्थात् महावारी के समय महिलाओं के गृहकार्य, रसोई घर में जोखिम भरे कार्यों से मुक्त रखना। पुराने जमाने में महिलाएं बहुत दूर से पानी सिर पर उठाकर लाती थी । संयुक्त परिवार में महिलाओं को अकेले खाना बनाना पड़ता था इसलिए इस प्रकार उनके स्वास्थ्य में गिरावट की संभावना अधिक दिखाई दी। तब गुरुजी ने यह नियम लागू किया था, किंतु स्वास्थ्यप्रद लाभ को ध्यान में रखते हुए आज भी बिश्नोई समाज में महावारी के दिन महिलाओं को स्वस्थ भोजन घर के अन्य सदस्य बनाकर खिलाते हैं । यदि घर में कोई महिला नहीं है तो पिता-पति और भाई भी उसे आदरपूर्वक भोजन और सुविधाएं प्रदान करते हैं । महावारी जैसी आम बात को

भारत में पुरुषों से छुपायी जाती हैं लेकिन यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है इस बात को बिश्नोई समाज में लज्जा की दृष्टि से नहीं बल्कि सम्मान के साथ महिला को देखा जाता है।

'तीस दिन सूतक'

महिला की संतान उत्पति के समय माँ और संतान के अच्छे स्वास्थ्य के लिए उसे एकांत और शांतमयी स्थान प्रदान करने के साथ गृहकार्यों से मुक्त रखकर उसको आराम करने की हिदायत दी गई है। तीस दिन तक किसी प्रकार के कार्य नहीं करवाएं जाते हैं। मां को पूरी तरह स्वस्थ होने के लिए स्वस्थ आहार देना तथा जच्चा और बच्चा दोनों की देखभाल अन्य सदस्यों की जिम्मेदीरी होती हैं। इस नियम को भी केन्द्र सरकार और राज्य सरकारें आज समझ सकी हैं। वे अस्पताल में जच्चे और बच्चे की सुरक्षा की बात करती हैं। अर्थात् महिलाओं की शारीरिक और मानसिक समस्याओं को समझते हुए उनके स्वास्थ्य हेतु उचित संदेश दिए गए।

इसी प्रकार पर्यावरण और वन्य जीव संरक्षण हेतु नियम बनाये गए हैं जिसमें वन्यजीवों के प्रति दयाभाव, बैल का बधियाकरण पर निषेध, हरे वृक्षों की कटाई पर प्रतिबंध, गाय और अन्य जानवरों को कसाई खाने में भेजने पर प्रतिबंध, सूखी लकड़ियों को जलाने से पूर्व उनमें कीड़े-मकोड़े देखना यदि है तो ऐसी लकड़ी नही जलाने का आदेश दिया। अर्थात गुरुजी के इन नियमों को बहुत गहराई से समझें तो यह नियम केवल बिश्नोई समाज के लिए ही नहीं बल्कि जनकल्याण के लिए बनाए गए हैं।

पुराने जमाने में प्राकृतिक आपदा, भूकंप, बाढ़, जल-प्लावन, वन्य जीवों के शिकार तथा पारिस्थितिकी असंतुलन को देखते हुए गुरुजी ने नियमों को निर्धारित किया। यदि संपूर्ण भारत को उनके नियमों की समझ होती तो शायद पर्यावरण प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण जैसी समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता। 'स्वच्छ भारत' की चिंता गुरुदेव ने अपनी वाणी में कई बार की हैं। उन्होंने स्वच्छता से संबंधित नियम 29 नियमों में निर्धारित किये हैं जिसमें आस-पास के वातावरण की शुद्धता के साथ आंतरिक शुद्धता को भी बनाये रखने का आह्वान किया हैं।

आंतरिक वातावरण में पारिवारिक कलह, रिश्तों की टकराहट, आत्महत्या, अत्याचार जैसी घटनाएं निरन्तर बढ़ रही थीं। ऐसे में गुरुजी ने शील-संतोष और क्षमा-दया और "तन-मन धौइये संजम होइये हरख न खोइये"[5] की बात बतायी हैं।

बिश्नोई समाज द्वारा पर्यावरण संरक्षण और बलिदान-1730 में जोधपुर मारवाड़ के महाराजा अभयसिंह ने चूने के भट्टे को जलाने के लिए ईधन की आवश्यकता बतायी। और राजा ने मंत्री गिरधारी भण्डारी को लकड़ियों की व्यवस्था करने का आदेश दिया, मंत्री ने जोधपुर से 25 किलोमीटर दूर खेजड़ली गाँव से वृक्ष लाने की सलाह दी। खेजड़ली गाँव में बिश्नोई लोग अधिक रहते थे इसलिए वहाँ हरे वृक्ष अत्यधिक मात्रा में थे। बिश्नोई समाज के लोग पर्यावरण और वन्यजीव के प्रति अत्यधिक प्रेमभाव रखते हैं। वहाँ से जब गिरधारीसिंह के नेतृत्व में वृक्ष काटने लगे तब वहाँ की 42 वर्षीय अमृता देवी और उनकी तीन पुत्रियाँ आसु, रतनी, भागु बाई और पति रामू खोड़ सहित 363 लोगों ने अपने जान की परवाह नहीं करते हुए पेड़ बचाने के लिए बलिदान दिया। यद्यपि भारत के 'चिपको आंदोलन' की शुरुआत यहीं से मानी जाती है। अमृता देवी पहली आधुनिक नारी मानी जाती हैं जिसने वृक्षों के लिए राजा-महाराजाओं का सामना किया।

खेजड़ली आंदोलन की तरह पेड़ों के लिए बूचोजी के बलिदान की भी अमर कथा बिश्नोई समाज में मिलती हैं। नरसिंघदास ठाकुर ने ईमारती लकड़ियों के लिए अपने लोगों को पोलावास गांव मेड़ते में भेजा था। तब वहाँ बूचोजी ने उन लोगों को ललकारते हुए कहाँ- "यह मैं शहीद होने के लिए तैयार खड़ा हूँ आइये, कौन कर मेरा तमाम करेगा। मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं बिल्कुल इस जगह से हिलूंगा नहीं, सामने हाथ उठाउंगा नहीं, मेरा सिर धड़ से अलग कर दीजिये। नहीं अन्य कोई मेरा भाई बंधु विरोध करते हुए आपका सामना करेगा। आप लोगों में से जो अपने को शूरवीर समझता है वह सामने आ जाइये। मेरी एक शर्त है वह भी सुन लो मेरे बलिदान हो जाने के बाद फिर कभी तुम्हारे संबंधियों से कोई हरा वृक्ष नहीं काटेगा और नहीं कटवाने की प्रेरण देगा। यह जो वृक्ष कट गये है इनकी जगह तुम्हे दूसरे रूंख लगवाकर देने होगे यही रूंख कटने की घटना इस इलाके में अंतिम होनी चाहिये। इसलिए मेरा शरीर समर्पित है। मेरा शरीर काट लीजिये परन्तु रूंख नहीं काटना।"[6] अर्थात इस प्रकार गुरुजी के अनुयायी पर्यावरण की रक्षा करते हुए प्राणोत्सर्ग करने से पीछे नहीं हटते हैं। हाल ही में बॉलीवुड के प्रसिद्ध कलाकार सलमान खान सहित कुछ फिल्म अभिनेताओं

को बिश्नोईयों के गाँव जोधपुर के निकट काले हिरण का शिकार करते हुए देख लिया तो बिश्नोई समाज के लोग एकत्रित होकर वन्यजीव संरक्षण के प्रति आवाज उठाई। सलमान खान ने उन लोगों को पैसों का लालच देकर, असमाजिक तत्वों के द्वारा डराने-धमाकने का खूब प्रयास किया किंतु आम सामान्य किसान परिवार के लोग बेझिझक होकर वन्यजीवों की सुरक्षा हेतु लड़ते रहें।

आजकल आधुनिक दौर में कई प्रकार की योजनाएं और तकनीकी गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाता हैं। लेकिन उन योजनाओं और आधुनिक संयत्रों के नकारात्मक प्रभाव पर ध्यान नहीं दिया जाता। हाल ही में पश्चिमी राजस्थान की तरफ सोलर हब विकसित हो रहे हैं। इससे पर्यावरण और वन्य जीवों के अस्तित्व के खतरे को देखते हुए बिश्नोई समाज के लोगों ने जनआंदोलन किया हैं। उन्होंने बताया कि- "अखिल भारतीय बिश्नोई महासभा का आरोप है कि गांव में सोलर प्लांट लगाने के लिए ली गई जमीनों पर मौजूट खेजड़ी के हजारों पेड़ों को काट कर दफना दिया गया है। बिश्नोई समाज के मुताबिक, खेजड़ी के लगभग 10,000 पेड़ों को काटा गया है जिसमें प्रशासन की मिलीभगत शामिल है। वहीं बिश्नोई समाज के कुच लोगों ने प्रशासन के सामने जेसीबी के पेड़ों के अवशेष मिले जिसके बाद समाज के लोगों का आक्रोश फूटा। इसके बाद पर्यावरण प्रेमियों ने एक-एक कर सैकड़ों की संख्या में काटकर जमीन में दबे पेड़ों को बाहर निकाला कार्रवाई के लिए फलोदी एडीएम को ज्ञापन सौंपा और अनिश्चितकालीन आमरण अनशन किया।"[7] यह बिश्नोई समाज का केवल एक ज्ञापन और केवल खाना-पूर्ति करने वाला अनशन नहीं था बल्कि 500 साल बाद भी गुरु जांभोजी की वाणी और संदेशों को निष्ठापूर्वक जीवन में उतारते हुए जीवनयापन करने का उदाहरण हैं।

गुरु जी की वाणी का प्रभाव न केवल बिश्नोई पंथ के लोगों के पर हैं बल्कि बिश्नोई समाज के आसपास लोग भी उनकी तरह तरह पर्यावरण, वन्यजीव और मानवता की रक्षा करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। जैसाकि रामचन्द्र शुक्ल जी ने कहा है कि "जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृतियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य परम्परा के साथ उनका सामजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है। जनता की चित्तवृति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है। अतः कारणस्वरूप इन परिस्थितियों का किचिंत दिग्दर्शन भी साथ-ही-साथ आवश्यक है।"[8] अर्थात् गुरुजी की 'सबदवाणी' समस्त राजस्थान के कई संत महात्माओं पर दिखाय़ी देता हैं। उन्होंने गायों, महिलाओं की रक्षा करते हुए मानवता का पाठ पढ़ाते है-वीर तेजाजी, गोगाजी, हड़बूजी, रामदेवजी, जसनाथ, दादूदयाल, सुंदरदास इत्यादि।

इतना ही नहीं आज के संदर्भ में यदि देखा जाए तो आधुनिक समय और भागदौड़ में महिलाओं को अपनी संतान का पालन-पोषण करने में असफल होते दिखायी दे रही हैं। वहीं राजस्थान में बिश्नोई समाज की महिलाएं घायल नवजात हिरण, खरगोश, गाय के बछड़ों, मोर, नील गायों का इलाज करवाकर पालन पोषण करती हैं। ये महिलाएं कई बार हिरण के बच्चों को स्तनपान भी करती हैं। इस समुदाय के लोग वन्यजीव की सुरक्षा करते हुए हत्यारों और शिकारियों से लड़ते हुए बलिदान देते हैं। इनके इलाके में वन्यजीवों का शिकार करना और पेड़ काटने पर पूर्ण प्रतिबंध हैं। इनकी जीवन शैली अत्यधिक साधारण औऱ उच्चादर्शों से परिपूर्ण हैं।

बिश्नोई समाज के लोग भारतीय आदर्शों को जीवन पूर्ण रूप से उतारते हैं। इनका मानना हैं-

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग भवेत्।"

ये लोग स्वार्थता से परे होकर मानवता की रक्षा सदैव करते आए हैं। हाल ही के ताजा उदाहरणों में बिश्नोई समाज के लोगों ने कोविड महामारी में दीन-गरीब और असहाय लोगों के लिए बिना किसी भेदभाव के तमाम प्रकार की सहायता करने आगे आए। राजस्थान में गायों में आयी 'लम्पी महामारी' के दौरान सरकार ने उचित समय पर कोई सहयोग नहीं किया किंतु बिश्नोई समुदाय के लोग ग्रामीणों के साथ मिलकर उन गायों का इलाज करवाने, देशी उपचार और चारा-पानी देने में डटें रहें। इनके प्रत्येक गाँव में वन्यजीव संरक्षण और गौशाला का प्रबंध सरकारी आर्थिक सहयोग के बिना स्वयं करते हैं। राजस्थान जैसे इलाके में भयंकर ठंडी और गर्मी में वन्यजीवों,गायों और वनोन्मूलन की सुरक्षा करने के लिए ग्रामीण लोग चंदा इकट्ठा करके करते हैं।

गुरुजी की वाणी में 'पहला सुख निरोगी काया' बिश्नोई समाज लोग नित्य स्नान करके हवन करते हैं। इनके समाज में अमल, तम्बाकू और भांग, अफीम, मदिरा पर पूर्ण प्रतिबंध हैं। इस समाज के लोग नशा प्रवृत्ति से दूर रहते हैं । नशे के कारण आज लाखों की संख्या में प्रतिदिन एक्सीडेंट और हत्याएं तथा दुराचार हो रहे हैं किंतु बिश्नोई समाज के लोग सदैव प्रयासरत रहते हैं कि इनके समाज को स्वस्थ और स्वच्छ बनाएं रखने के लिए। यदि कोई नशा करते हुए, महिलाओं पर अत्याचार करते हुए, चोरी करते हुए देखा जाता है तो समाज के संत-महात्मा और बड़े लोग उसे दण्ड देते हैं । गुरु जांभोजी का मुक्तिधाम मुकाम में प्रतिवर्ष मेले का आयोजन किया जाता है। वहाँ प्रत्येक वर्ष की गतिविधियों के अच्छे-बुरे कर्मों का लेखा-जोखा करते हुए संत-महात्मा सुधार करने का आदेश देते हैं। गुरुजी के अनुयायियों ने उनकी शिक्षा अपने जीवन इस प्रकार उतारा हैं कि पाँच सौ साल बीत जाने के बाद भी बहुत संवेदनशील होकर उनकी वाणी का अनुसरण करते हैं। इस समाज के लोग सदैव आत्मनिर्भर रहे हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि बिश्नोई समाज का कोई भी इंसान चाहे उच्च हो या निम्न हो वह कभी भिक्षा मांगते हुए कभी नजर नहीं आता हैं। इनके समाज का गरीब से गरीब अपनी मेहनत और परिश्रम के साथ जीवनयापन करता है और आस-पास के पशु-पक्षियों को भी दाना-पानी देता है। इस समाज में जब फसल निकाली जाती है, प्रत्येक घरों में उस अनाज का बहुत बड़ा हिस्सा आवारा गायों, पशु-पक्षियों और हिरणों-नील गायों के लिए दिया जाता हैं। अमावस्य, पूर्णिमा और ग्यारस के दिन ये लोग वन्यजीवों, गायों तथा पक्षियों के लिए मंदिर, चबूतरों और गौशाला में अनाज तथा चारा दान में देते हैं। मंदिरों और घरों में वातावरण शुद्धिकरण के लिए प्रतिदिन यज्ञ किया जाता हैं।

गुरुजी की वाणी 500 वर्ष के बाद भी प्रासंगिक हैं और उनके अनुयायी समय के साथ पर्यावरण और मानवता का संदेश राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर देने के लिए प्रयासरत हैं। 4-5 फरवरी, 2023 को अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन दुबई में आयोजित किया गया। इस अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन का विषय "वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियाँ और बिश्नोई समाज के सिद्धांतों में समाधान" था जिसपर चिंतन-मंथन किया गया । इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य यह था कि आज पर्यावरण के समक्ष वैश्विक स्तर पर अनेक चुनौतियां हैं। जल, जमीन और जंगल खतरे में हैं। वायु और ध्वनि प्रदूषण के कारण अनेक प्रकार की बिमारियाँ से त्रस्त हैं। ओजोन परत छलनी हो रही है। जैव विविधता में दिन-ब-दिन संकट बढ़ रहे हैं । जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, मरूस्थलीकरण, वनोन्मूलन, पारिस्थितिकी असुंलन, अम्लीय वर्षा इत्यादि कारणों से पर्यावरण के सामने संकट और चुनौतियाँ हैं, इन तमाम समस्याओं के साथ जीवनयापन करना आसान नहीं है। आज भले ही कृत्रिम मेधा (Artificial intelligence) बढ़ावा दिया जाने लगा हो ...किंतु इन समस्याओं और संकटों से निपटने के लिए हमारी ज्ञान-परम्पराओं और संस्कारों को जीवन में लागू करते हुए आगे बढ़ना होगा।

कई बार समाज के लोग अपनी तृप्ती और धार्मिक आडम्बरों के कारण वातावरण और जीव-जन्तुओं को हानि पहुंचाते हैं। उन्हें गुरुजी जीवन के उच्चादर्श बताते हैं कि –

सुंणि रे काजी सुंणि रे मुल्ला सुंणि रे बकर कसाई।
किण री थरपी छाळी रोसो किण री गाडर गाई ?
कांढै भागै करक दुहेली जायौ जीव न धाई।
थे तुरकी छुरकी भिसती दैवौ खायबा खाज अखाजूं।
चरि फिरि आवै सहजि दुहावै तिंहका खीर हलाली।
तिंहकै गळै करद क्यौं सा'रो ? थे पढि गुंणि रहिया खाली।

हीरालाल माहेश्वरी ने एक तथ्य में स्पष्ट किया है कि गुरुजी के दर्शन का प्रभाव जनसाधारण के साथ-साथ कई शासकों पर भी पड़ा था। जीव-दया पालनी की बात का महत्त्व समझते हुए सिंकदर लोदी, मुहम्मद खाँ नागौरी, मेड़ता के राव जैतसी, जोधपुर के राठौड़ राव दूदा, जैसलमेर के रावल जैतसी, मेवाड़ के राणा सांगा ने गौ हत्या पर प्रतिबंध लगाया था।

विस्तृत फलक में देखा जाए तो गुरु जम्भेश्वर का तत्त्व-चिंतन समन्वयवादी हैं। उन्होंने जीवनादर्शों से विचलित होने वालों चेतावनी देते हुए कहते हैं- "इस कलियुग में तत्त्वज्ञान न हो पाने के कारण सभी भ्रम में पड़े दीखते हैं। ब्राह्मण वेदों को, काजी क़ुरान को और जोगी जोग को भुला बैठे हैं तथा मुण्डियों में तो अक्ल नहीं रही है।"[9] वे कहते है-"मैं किसी का नहीं हूँ; केवल सच्चे पुरुषों का हूँ। मैं तो सच्चे हिंदू का देव और सच्चे मुसलमान का पीर हूँ।" गुरु जांभोजी की वाणी तथा उनके तत्त्व चिंतन की गहराई, भक्ति-वैविध्य, गुरु महिमा, ज्ञानोपदेश, कर्मशीलता, आत्मालोचना और आत्मज्ञान में लोकमंगल की भावनाएँ तथा सुधारवादी दृष्टि दिखाई देती हैं।

हमारे देश में गुरु की महत्ता का बखान सदैव होता हैं। गुरु जांभोजी ने भी गुरु के संबंध बताया हैं-

सतगुरु ऐसा तत्त्व बतावै, जुग जुग जीवै बहुरि न आवै
गुरु न चीन्हों पंथ न पायो, अहल गई जमवारू
उत्तम जंग सूं, उत्तम रंग सूं रंगू। उत्तम लंग सूं, उत्तम ढंग सूं ढंगू।

आज देश को पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन जैसे मुद्दों पर बात करनी पड़ती हैं। विश्वस्तर पर पर्यावरण और जैव विविधता के बढ़ते खतरों के कारण संपूर्ण राष्ट्र चिंतित हैं और इससे संबंधित सम्मेलनों का आयोजन भी किया जा रहा हैं। इसके संदर्भ में प्रबुद्ध साहित्यकार ऋषभदेव शर्मा लिखते है- "पर्यावरण संरक्षण के लिहाज से भी यह अच्छी खबर है कि सम्मेलन में करीब 190 देशों के मत्रियों और अधिकारियों ने सहमति जताई है कि जैव विविधता की रक्षा वर्तमान विश्व की प्राथमिकता होनी चाहिए। इस आपसी समझ का ही असर है कि इस समझौते में कीटनाशकों के उपयोग को क करने जैव विविधता को होने वाले नुकसान को रोकने और उसे सुधारने के लिए संकल्प जताया गया।"[10] उनका मानना है पर्यावरण के हितैषी आदिवासी समाज भी सदैव रहा है। सरकारी योजनाओं से भी वे भयभीत रहते हैं क्योंकि जल,जमीन और जंगल को सदैव इनसे खतरा हैं। इसी प्रकार गुरुजी और बिश्नोई समाज के बारे में देश के प्रबुद्ध राजनेताओं ने कई बार अपने मंचीय भाषणों के माध्यम संदेशों के बारे में बताया हैं –गजेन्द्रसिंह शेखावत ने कहा- "मित्रों मैं बिश्नोई समाज से निवेदन करता हूँ कि वे मुझे गोद लेंवे मैं उनके साथ 24 घंटे काम करूँगा और पर्यावरण की रक्षा करूँगा।"[11] उन्होंने यह भी बताया कि "बिश्नोई समाज जल, जगंल और जमीन के वास्ते बात करता है, जबकि पाश्चात्य संस्कृति के अंधाधुंध अनुकरण के कारण हमने इन प्रकृति प्रदत्त चीजों का खुद को मालिक समझ लिया। भगवान जंभेश्वर ने प्रकृति और पर्यावरण की रक्षा का संदेश ना दिया होता तो हमारे लिए क्या ये पर्यावरण बचता ? आप लोगों ने पेड़ों की रक्षा के वास्ते बलिदान दिया। आज विश्वस्तर पर उदाहरण पेश करने की क्षमता है।"[12] आजादी के अमृत महोत्सव में माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने अपने वक्तव्य में पर्यावरण की बात करते हुए बताया है कि "संयुक्त राष्ट्र द्वारा भारत को 'चैम्पियन ऑफ द अर्थ' सम्मान बिश्नोई जैसे समुदायों द्वारा किए गए बलिदानों के कारण ही संभव हो पाया हैं...लोग कहते है कि मोदी जी आपका सम्मान हो गया है। मुझे लगता है कि दुनिया को पता नहीं है मेरी राजस्थान की धरती पर बिश्नोई समाज...जब दुनिया को ग्लोबल वार्मिंग का 'ग' मालूम नहीं था और पर्यावरण का 'प' पता नहीं था, तब मेरे बिश्नोई समाज के लोगों ने सदियों पहले पर्यावरण की रक्षा के लिए बलिदान दिए। आज भारत को चैम्पियन द अर्थ जो सम्मान मिला है उसके मूल में पर्यावरण की रक्षा के लिए बलिदान देने की परम्परा वाले देश के कोने-कोने में हैं। भाइयों-बहनों भारत आज उसकी महान परम्परा और उसके मूल्यों के द्वारा मिली शिक्षा है उसके लिए इन सदियों से चली आई परम्परा वालों को शत-शत नमन करता हूँ। इस परम्परा से जुड़े हर व्यक्ति को मैं नमन करता हूँ।"[13] अर्थात् आधुनिक समय में राष्ट्र और पर्यावरण हित के लिए हमारी संत-महात्माओं के द्वारा बतायी गई ज्ञान परम्परा की और लौटने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूची

1. गुरु जांभोजी : तत्त्व-चिंतन और उच्च जीवनादर्श का आग्रह, गगनांचल पत्रिका, मई–जून 2022 अंक, पृष्ठ संख्या-36
2. वही, पृष्ठ सख्या 36
3. https://pib.gov.in/pressReleasel framepage.aspx?prid=186102
4. https://www.bishnoism.org-ka-balidan.html?m=1
5. jodhpurthousandofkhejritreesdi-rajasthan - au275-129602.html
6. श्री जम्भवाणी टीका, हीरालाल माहेश्वरी, श्री गुरु जम्भेश्वर साहित्य सभा, फिरोजपुर, द्वितीय संस्करण 2011
7. हीरालाल माहेश्वरी, वही, पृष्ठ संख्या-33
8. वही, पृष्ठ संख्या-13
9. https://www.newslaundary.com/2018/12/06/raje-goverment
10. विविधता बचेगी,तो मनुष्य बचेगा,डेली हिंदी मिलाप, बुधवार, 21 दिसम्बर, 2022

सहायक आचार्य
खाज़ा बंदानवाज विश्वविद्यालय, कलबुर्गी, कर्नाटक

6 बीकानेर राज्य (1500ई. से 1800 ई.) की कृषि भूमि का विभाजन व उसका स्वामित्व : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ. मनोज कुमार सिनसिनवार

15वीं शताब्दी से पूर्व बीकानेर राज्य राजस्थान के उत्तरी भाग का बहुत बडा हिस्सा था जिसका राजनैतिक इकाई के रूप में कोई महत्वपूर्ण स्थान नही था लेकिन राव जोधा (1438–89 ई.) के पाँचवें पुत्र राव बीका (1465–1504 ई.) ने राजस्थान के उत्तरी पश्चिमी रेगिस्तानी क्षेत्र की विश्रंखलित जातियों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर 1488ई. में पहली बार राजनैतिक, प्रशासनिक व क्षेत्रीय एकता स्थापित की।[1] राज्य की भौगोलिक व प्राकृतिक दशाऐं कृषि के प्रतिकूल होते हुये भी यहाँ के शासकों के सहयोग से कृषकों व निम्न जाति के लोगों द्वारा कृषि को जीविका उपार्जन के एक साधन के रूप में रखा।

बीकानेर क्षेत्र पर राव बीका द्वारा अधिकार स्थापित करने से पूर्व सल्तनत काल में यहाँ कृषि की क्या व्यवस्था प्रचलन में थी, इसके विशेष साक्ष्य उपलब्ध नहीं हुए हैं। लेकिन बीकानेर क्षेत्र का एक विशेष प्रशासनिक इकाई के रूप में गठन होने के साथ ही कुछ साक्ष्य उपलब्ध होने लगते हैं। लेकिन 16वी. व 17वी. शताब्दी में बीकानेर राज्य में जो कृषि पद्धति अपनाई जा रही थी, उसके साक्ष्य अभिलेखागार में सुरक्षित बहियों पर आधारित हैं।

हासल व सावा बहियों का गहन अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि बीकानेर राज्य की भूमि स्वामित्व के विचार की दृष्टि से, चार वर्गों में विभाजित थी।[2] खालसा, जागीर, भोम व शासन। खालसा भूमि राज्य के सीधे स्वामित्व में रहती थी। जिसमें लगान लगाने, वसूली करने और लगान में छूट प्रदान करने का काम सीधे राज्य के अधिकारी करते थे। जागीर वह भूमि थी जो राज्य की ओर से सैनिक सेवा या अन्य सेवाओं के उपलक्ष्य में सामन्तों या कर्मचारियों को दी जाती थी। ऐसी भूमि को बदलना या बेचना राज्य की आज्ञा के बिना संभव नहीं था। जागीरदारों को सतर्क बनाये रखने के लिये उनकी जागीरें अदल–बदल की जाती थीं और उन्हें कम या ज्यादा भी किया जा सकता था। 'भोम' ऐसी जागीर थी जो कि राज्य की अनेक प्रकार से सेवा करने वाले भौमियों को प्रदान की जाती थी। ऐसी भूमि को बदलना या बेचना राज्य की आज्ञा के बिना संभव नही था। इन भौमियों से कोई कर नहीं लिया जाता था और इनसे जमीन भी नहीं छीनी जाती थी। इन भौमियों से सरकारी सहायता के लिये अनेक प्रकार की सेवाऐं अवश्य ली जाती थीं। भूमि का चौथा भाग ''शासन'' कहलाता था यह भाग राज्य के अधीन था और इसकी व्यवस्था पटवारी, पंचायत आदि के माध्यम से होती थी। शासन भूमि एक प्रकार से पुण्यार्थ भूमि होती थी। उसे न तो अपहरण किया जा सकता था और न ही बेचने का अधिकार प्राप्त था। कुछ भूमि गाँव के पशुओं के लिए चरने के लिए खाली रखी जाती थी। ऐसी भूमि को ''चणौत'' कहते थे।

जिस प्रकार से भूमि के स्वामित्व के विचार से वर्गीकरण किया गया था, उसी प्रकार से खेती की क्षमता की दृष्टि से भी भूमि का विभाजन किया गया था। ऐसा विभाजन उसकी भौगोलिक व प्राकृतिक विशेषताओं के कारण किया गया था। इस प्रकार से बीकानेर राज्य की रेतीली भूमि कई वर्गो में बँटी हुयी थी। जिसमें ''धोरा'', मगरा, खारी पट्टी, ताल व सुई की भूमि का नाम उल्लेखनीय है। इसके अलावा चमड़े के पात्र से सीचीं जाने वाली भूमि को ''कोशवाहक'' कहते थे। तालाब की भूमि को ''तलाई'', नदी के किनारे वाली भूमि को ''कच्छ'' और कुऐ या गड्डे के पास वाली भूमि को ''डीमडु'' और गाँव के पास वाली जमीन को

''गोरमो'' कहते थे।

इस वर्गीकरण के अतिरिक्त 17वीं व 18वीं सदी में भूमि के उपज के आधार पर भी वर्गीकरण किया गया था। जैसे सिंचाई की सुविधा वाली जमीन ''पीवल'' कहलाती थी। पानी से भरी हुई जमीन ''गलत हाँस'' कहलाती थी। जोती जाने वाली भूमि ''हकत–बहत'' कहलाती थी। काली उपजाऊ जमीन को ''माल'' कहते थे। पहाडी जमीन जो उपजाऊ होती थी उसको ''मगरो'' कहते थे। कंकर वाली जो जंगल की जमीन होती थी, उसको ''कांकड'' कहा जाता था। इन सभी प्रकार की भूमि को ''क्वारी'' और ''बंटा'' या ''कटका'' में बाँटा जाता था और इस भूमि को कुँऐं, नदी, तालाब व नहर आदि से सींचा जाता था।[3] इस प्रकार राज्य की भूमि, राजस्व प्रशासन नीति के अन्तर्गत भूमि की उत्पादन क्षमता के अनुरूप, राजकीय हितों के संवर्धन'' के लिये उक्त वर्गीकरण लागू किया गया था।

इसी आधार पर राज्य को चीरे व परगने भी, अपनी भूमि की उर्वरक शक्ति के आधार पर कई क्षेत्रों में बाँट दिये गये थे। उत्तरी पूर्वी के क्षेत्र के चीरे–नोहर, रीणी, परगना राजगट व भटनेर में अवश्य ''सुंई'' भूमि की प्रधानता होने के कारण, इस प्रकार भू–वर्गीकरण से प्रभावित नहीं थे। इसके विपरीत राज्य के मध्यवर्ती दक्षिण व पश्चिम क्षेत्र के चीरों–शेखसर, गुसोईसर, जसरासर, मगरा, खाकी पट्टी, पूगल और सदर की भूमि, उत्पादन क्षमता के आधार पर विभाजित की गयी थी।[4]

यह भूमि पुनः अपनी विभिन्न किस्मों में बाँटी गयी थी। प्रथम वर्ग में जोत की भूमि आती थी जो कि ''माजरुआ'' के नाम से जानी जाती थी। जिसकी उत्पादन क्षमता साधारण रेगिस्तानी भूमि के स्तर की थी। ''मजरूआ'' में ''ताल'' की भूमि उत्तम होती थी। ''मजरूआ'' भूमि बरसात के पानी से सींचे जाने पर ''बारानी'' के नाम से पुकारी जाती थी।[5]

द्वितीय श्रेणी की भूमि पड़त या बंजर कहलाती थी। पड़त भूमि वह होती थी, जो साधारणतया तीन वर्षों के जोत के पश्चात कुछ समय के लिये छोड़ दी जाती थी। बंजर भूमि अधिक वर्षा होने पर ही काम आ सकती थी। मध्यवर्ती व दक्षिणी क्षेत्र के चीरों के कुछ गाँव में एक उत्तम किस्म की भूमि भी विद्ममान थी जिसे ''बैरी'', ''चाही'' व ''बॉडी'' आदि के नाम से पुकारा जाता था। इसे कुँओं, बावडियों व तालाबों के पानी से सींचा जाता था। यहाँ की भूमि में अत्युत्तम भूमि का लाभ ''उन्नाव'' की भूमि में था जहाँ बरसाती नाले का पानी आकर भर जाता था। ''बेरी'' भूमि की एक किस्म भी थी, जिसमें सामान्यतया बेरी की छोटी–छोटी झाडिया उगी होती थी।[6]

उत्तर पूर्व की भूमि सुंई जमीन थी जोकि समतल भूमि व चिकनी होती थी। उत्तर व उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र तीन प्रकार की भूमियों में बँटा हुआ था जिसमें निम्न गाँव सम्मिलित थे हरदेसर, राजलदेसर, जैतपुर, साण्डवा, खारबरा, करणपुरा, विद्या आदि। प्रथम टीवों की भूमि जो कि ''जमींधोरा'' कहलाती थी। द्वितीय समतल जमीन जो कि ''रोही'' कहलाती थी। तृतीय सिंचाई की जमीन थी जोकि ''नाली'' कहलाती थी।

भौगोलिक व प्राकृतिक दृष्टि से इस क्षेत्र की भूमि ''पड़त'' की भूमि थी। रेतीली अनुपजाऊ जमीन, सिंचाई के साधनों का अभाव, पीने के पानी की कमी, खाद्य फसलों का अधिक महत्व, प्राकृतिक विपदाओं की मार तथा जनसंख्या की कमी के कारण राज्य में कृषि के उपयोग में आने वाली भूमि अत्यन्त ही सीमित होती थी।

चीरों व परगनों में जो भूमि जोत योग्य व उपजाऊ होती थी उनमें जोती जाने वाली भूमि का अनुपात अलग–अलग था। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है। कि बीकानेर राज्य में 50 प्रतिशत से अधिक, जोत योग्य कृषि भूमि उपलब्ध थी। इसके बावजूद भी आज की तरह तकनीकि साधन उपलब्ध न होने के कारण राज्य में एक तिहाई से भी कम भूमि जोती जाती थी।[7]

जहाँ तक खालसा गाँव की भूमि का प्रश्न है उसमें कृषि योग्य भूमि, जोती गई भूमि तथा

बंजर भूमि के विस्तृत विवरण उपलब्ध होते हैं। चूँकि खालसा के गांव राज्य के हर भाग में स्थित थे इसलिये भूमि की अलग–अलग बनावट, उपजाऊ शक्ति, उपलब्ध सिंचाई के साधन, यातायात के साधन व अन्य आर्थिक सुविधाओ के परिणाम स्वरूप उनमें कृषि योग्य भूमि, जोती गई भूमि तथा बंजर भूमि के आँकड़े अलग–अलग प्राप्त होते हैं। जोकि निम्न तालिका से स्पष्ट हैं–

निजामत का नाम	कुल भूमि (एकड़)	जोती गई भूमि (एकड़)	प्रतिशत
बीकानेर	5,13,131	55,928	10.87
सुजानगढ़	1,44,626	50,771	35.10
रीणी	7,46,407	3,50,318	47.00
गंगानगर	10,52,446	4,53,785	43.10
सूरतगढ	18,14,955	4,70,834	25.90
बीकानेर राज्य	42,71,565	14,21,636	33.28

उपर्युक्त आँकडों का अध्ययन अगर परगना स्तर पर किया जाए तो कृषि योग्य भूमि तथा जोती गई भूमि में काफी अन्तर आ सकता है।

भू–स्वामित्व अधिकार :

कागदो की बहियों में लिखित व सनद के आदेश राज्य में काश्तकारो के भूस्वामित्व अधिकारो का पता चलता है। राज्य प्रशासन जिस काश्तकार को ''मोहरछाप लिखित कागद'' या पट्टा प्रदान करता था जिसमें काश्तकार को भूमि को जोतने का वंशानुगत निजी अधिकार मिल जाता था।[8]

काश्तकार या आसामी के सन्तान न होने की स्थिति में पत्नी या उसके पश्चात निकटवर्ती सम्बन्धी को इस भूमि को जोतने का अधिकार दिया जाता था।

मृतक आसामी की पत्नी द्वारा पुर्नविवाह करने पर पति की सम्पति में अधिकार समाप्त हो जाते थे। किसी भी प्राकृतिक स्थिति में किसान अपने घर या खेत को छोड़कर चला जाता था तो भी उसके भू स्वामित्व अधिकार समाप्त नहीं होते थे। गाँव का कोई भी व्यक्ति खेत छोड़कर जाने वाले व्यक्ति की भूमि को जोतने लगता तो वास्तविक स्वामी के वापस आने पर उस प्राप्त अधिकार को छोड़ देता था।[9]

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि गाँव को पट्टा या खालसा किसी भी प्रकार में बदलने पर आसामी के स्वामित्व अधिकारों में किसी प्रकार का परिवर्तन नही आता था। इस प्रकार जो काश्तकार किसी अन्य कास्तकार के खेत को जोतने योग्य बना लेता था उस काश्तकार को उस खेत पर तीन वर्ष तक कृषि करने का अधिकार मिल जाता था। इस कृषि करने के बदले में वह भूस्वामी को ''मुकाता'' व ''मलवा'' चुकाता था। राज्य में ऐसे विवरण भी प्राप्त हुये हैं जबकि 30 वर्ष तक भूमि को किराये पर जोता गया था। काश्तकार राज्य हित में ही अपने समस्त अधिकारों का प्रयोग कर सकते थे।[10]

इस प्रकार से काश्तकार को अपने अधिकार बनाए रखने के लिये राज्य की नीतियों का पालन करना अति आवश्यक होता था। इस प्रकार गाँव के निवासी अपने भूस्वामित्व अधिकारों, राज्य के प्रति अपने दायित्वों व सम्बन्धों का पालन करता था। ये भूस्वामित्व अधिकार वाले काश्तकार राज्य के प्रति अपने दायित्वों का सहानुभूति पूर्वक निर्वाह करते थे।

संदर्भ सूची :

1. गौरी शंकर हीराचन्द ओझा– बीकानेर राज्य का इतिहास, भाग–1, वैदिक यंत्रालय, अजमेर, विक्रम संवत् 1996, पृ. 92–95
2. जी.एस.एल. देवड़ा– रेगिस्तानी क्षेत्र में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कॉग्रेस प्रोशिडिंग, कोटा, 1976 ई., पृ.सं. 8
3. धान रे भोग री बही, वि.सं 1736/1679 ई. पृ.सं. 57
4. जी.एस.एल. देवड़ा– रेगिस्तानी क्षेत्र (बीकानेर राज्य) में कृषि योग्य भूमि व उसका वर्गीकरण, रा.हि.काँ, कोटा, 1976 ई., पृ.सं. 10
5. फेगन– सेटलमेंट रिपोर्ट– बीकानेर, 1930 ई., पृ. 35

6. खालसे रे गाँवा री बही, वि.सं 1753/1696, न. 1, पृ. 30–35
7. वही– पृ. 38
8. कागदों की बही– न. 2, कागद वैशाख बदी–2, 1810/31 मार्च 1763 ई.
9. डॉ. जी. एस. एल. देवडा–सोशियो इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ बीकानेर, जोधपुर, 1980, पृ.सं. 98
10. डॉ. जी. एस. एल. देवड़ा–राजस्थान की प्रशासनिक व्यवस्था, 1575–1818 ई., बीकानेर, 1981, पृ.सं. 214–216.

सहायक आचार्य–इतिहास
महारानी श्री जया राजकीय महाविद्यालय
भरतपुर, राजस्थान

7

उज़्बेक कवि आगाहीय

प्रो. उल्फ़त मुहीबोवा

19वीं सदी के उज़बेक साहित्य की उन्नति में बड़ा योगदान देनेवाला महान कवि, माहिर अनुवादक, जाने माने इतिहासकार मुहम्मदरिज़ा एरनियाज़बेक का बेटा आगाहीय का जन्म सन् 1809 के 17 दिसंबर को हिवा के पास कयात गांव मे एक सिंचाई करनेवाले के परिवार में हुआ। तावीज़ उल-आशीकीन नामक दिवान के प्राक्कथन में लिखा गया था कि हिवा खां के दरबार में ऊंचे पदों में काम करनेवाले सौ वंशों का प्रर्तिनिधित्व करनेवाले आगाहीय के परदादे मिराब (सिंचाई का काम) का पद संभाले थे। पर आगाहीय के बाप एरनियाज़बेक ने इस पद पर काम नहीं किया। इस पद को बाप के बाद एरनियाज़बेक का भाई आगाहीय के बड़े चाचा–महान कवि और इतिहासकार शेरमुहम्मद मुनीस ने संभाला। एरनियाज़बेक मुनीस छोटा भाई थे।

हिवा खां के दरबार के मिराबों के अधिकार और कर्तव्यों का अध्ययन किया यूरीय ब्रेगेल ने । फ़िरदावस उल इक़बाल के प्राक्कथन में लिखा था कि अबुलग़ाज़ीखान की तरफ़ से किये गये प्रशासनिक सुधारों के बाद दरबार में सिर्फ़ 4 मिराब रह गये, वे दरबार के 34 मुख्य मंत्रियों के बराबर थे। मिराब लोग सिंचाई तथा मरम्मत के काम करने के अलावा बादशाह के आक्रमण तथा शिकारों में साथ देते थे। मुख्य मिराब तो हमेशा बादशाह के साथ रहता था।

मिराब लोग दरबार में शादियों के आयोजन से लेकर कूटनीतिक संबंधों, खां के खानदान के सारे धन का भी देखभाल करते थे। मिराब के पद के लोग बादशाह के विभिन्न संघर्षों में भाग लेकर, बादशाह के सेना की सरदारी भी करते थे। आगाहीय भी कभी कभी अपनी कविताओं में संघर्षों में भाग लेने के बारे में लिखता था। पर इससे यह निष्कर्ष निकाला नहीं जा सकता है कि आगाहीय ने दूसरे यूद्धों में भाग नहीं लिया।[1] उदाहरण के लिये, सन् 1843 को मुहम्मद अमीन इनाक़ के नेतृत्व में जब बुखारा पर आक्रमण हुआ तो इस युद्ध में आगाहीय ने भी भाग लिया था।[2]

अय्याम ने लिखा था कि अल्लाक़ुल ने आगाहीय को दरबार में बुलाया और उसे खां के फ़ारमानों को लिखने का काम सोंपा गया था। [3]

अल्लाक़ुलखां के ईरान पर आक्रमण के समय जब सेना में वाबो बिमारी फैल गयी तो इसी बिमारी से बहुत सारे सैनिक और सरदार लोग गुज़र गये, जिन में मुनीस भी सन् 1829 को इसी बिमारी से गुज़रे। तब बादशाह ने आगाहीय को उनकी जगह मिराब के पद

---

[1] Тошев Н. Введение \\ Мухаммад Ризо Мироб Огаҳий. Жомеъ ул-воқеъоти султоний (Нашрга тайёловчи: Нурёғди Тошев). – Самарқанд–Тошкент, 2012, 6-бет. (ताशेव न. प्राक्कथन। मुहम्मद रिज़ा आगहीय। जामे उल-वाक़ेयाते सुलताने। (प्रकाशन के लिये तैयार करनेववाला: नुरयाग़दी ताशेव).– समरकंद-ताशकंद, 2012, पृष्ठ 6).

[2] Мунировв К. Огаҳий (Илмий ва адабий фаолияти). – Тошкент: “Фан”, 1959, 42-бет. (मुनीरोव क़. आगहीय। (व्यक्तित्व और कृतित्व). – ताशकंद, “फ़न”, 1959, पृष्ठ 42.)

[3] Ойёмий. Ўт чақнаган сатрлар. – Тошкент: Ғ.Ғулом номидаги Адабиёт ва санъат нашриёти, 1983, 71-бет. (अय्यामीय। आग की रेखाएँ। – ताशकंद, ग.गुलाम नामक साहित्य और कला प्रकाशन। 1983, पृष्ठ 71.)

पर नियुक्त किया था।

"क. एरगाशेव ने भी अपने इतिहास से संबंध किताब में लिखा था कि आगाहीय ने विशेष तौर पर सेना में काम किया, हिवा के खां की लड़ाईयों में सिपाही, सेना के सरदार के रूप मे काम करता रहा।"[4]

सन् 1851 को मुहम्मद अमीन खां की लड़ाई में अपनी बिमारी की बजह से आगाहीय भाग ले नहीं सका, इस कारण मिराब का पद छोड़ दिया और इस पद के लिये आगाहीय के चाचा का बेटा मुहम्मद करीमबेक का नाम दिया गया, क्योंकि आगाहीय का कोई दूसरा भाई नहीं था।

आगाहीय का दरबार में काम करते समय घोड़े से गिरकर पांव टूट जाता है। इसकी वजह से सालों बाद उनके दोनों पांव चलने से रुक जाते हैं।

मुहम्मद करीम अबदुल्लाह अपने आक्रमण की लड़ाईयों में मर जाता है, फिर सन् 1855 को बीमारी से गुज़रे बादशाह के तख्त पे आए कुतलुग मुरादखान (1855-1856) ने आगाहीय को फिर से मिराब के पद पर रखा और अपने जीवन के अंत तक इस पद में काम किया।[5]

आगाहीय सन् 1874 में 65 वर्ष की उमर में इस दुनिया को छोड़ दिया। उनको हिवा से 8 किलोमीटर दूरी पर स्थित उनके जन्म स्थान कियत गांव के शैयह मावलान बाबा क़बरिस्तान में दफ़नाया गया।

आगाहीय के पालन-पोषण और उसकी शहसियत की उन्नति में उनके चाचा, उस ज़माने का जाने माने कवि, मिराबों का सरदार शेरमुहम्मद मुनीस का बड़ा महत्व रहा। इस कारण आगाहीय भी उनकी बड़ी इज़्ज़त करते, उनका नाम बड़े आदर के साथ लेते और उनके बड़े भक्त थे। क्योंकि तीन साल की उमर में अपने पिता से जुदा होने के बाद मुहम्मदरीज़ा चाचा के हाथ में रह गया। इस बारे में अपने दीवान के प्राक्कथन में उन्हों ने लिखा था – मुहम्मदरीज़ा मिराब–अल मुलाक़्क़ब बिल आगाहीय इबने एरनीयाज़बेक मुनीस मिराब के हाथ रह गये। अपनी एक ग़ज़ल में लिखा था – "यदि आगाहीय में कोई ईलाही हैसियत हो तो इसमें अश्चर्य की कोई बात नहीं क्योंकि वे मुनीस की औलाद से हैं।"

अजब की कोई बात नहीं है यदि आगाहीय में ईलाही कुछ हो–कि इसका है सबब मुनीस की औलाद है वह।

वास्तव में आगाहीय के शहसियत तथा उनके शायर बनने में मुनीस और उनके दोस्तों का बड़ा असर हुआ। उन्होंने खुद लिखा था कि मुनीस को अपना उस्ताद समझते हैं। अपने ज़माने का मशहूर शायर मुनीस के घर में विद्वान, कवि, हाफ़ीज़ (गानेवाले), साहित्य तथा कला प्रेमी लोग इकट्ठा होकर विभिन्न विषयों पर बातचीत करते, गीत और संगीत की रातों का आयोजन करते थे। इन में हमेशा भाग लेना आगाहीय के कवि बनने में इन सभाओं का बड़ योगदान रहा।

बड़ा समझदार मुहम्मदरीज़ा पहले पाठशाला में पढ़ा फिर मदरसे में पढ़ाई जारी रखा। अपने ज़माने का हर ज्ञान हासिल किया, फ़ारसी और अरबी भाषाओं को बड़ी गहराई से सीखा। अपने दीवान के प्राक्कथन में उन्होंने लिखा था :

क़दम रखा ज्ञान के रास्ते में
कुछ हुनर का भी रास्ता ले लिया।

न रातों को आराम मिलता,
न किसी दिन सुकून मिल सकता।

हर क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त करने के लिये आगाहीय सुबह से शाम तक मेंहनत करता था। न रात को

---

[4] Эргашев К. Огаҳий ҳаёти ва фаолиятига доир \\ "Ўзбек тили ва адабиёти", 2019, 5-сон, 17-бет. (एरगाशेव क़. आगहीय के जीवन और कार्य के बारे में \\ "उज़्बेक भाषा और साहित्य"। 2019, पृष्ठ 5.)

[5] Тошев Н. Введение \\ Муҳаммад Ризо Мироб Огаҳий. Жомеъ ул-воқеъоти султоний (Нашрга тайёловчи: Нурёғди Тошев). – Самарқанд–Тошкент, 2012, 9-бет. (ताशेव न. प्रकथन। मुहम्मद रिज़ा आगहीय। जामे उल-वाक़ेयाते सुलताने। (प्रकाशन के लिये तैयार करनेववाला: नुरयाग़दी ताशेव).– समरकंद-ताशकंद, 2012, पृष्ठ 9.)

आराम से सो सकता, न दिन को कोई सुकुन मिलता (दिन रात तरह तरह के ज्ञान लेने में व्यसत रहता)।

उनकी कविताओं में जो तरक़्क़ीपसंद विचार, जीवन का अभ्यास, उपदेशपरक बातें उनकी महानता का एक प्रमाण है। उनके शब्दों में बोला जाए, तो: "रब ने उसे ज़रूरत से ज़यादा काबलियत बहश किया है।"

बादशाह और उनके आस-पास के लोग आगाहीय की किसी हद तक मदद करते थे और इस मदद से उनका गुज़ारा तो हो जाता था, फिर भी जब वे मिराब का पद छोड़ दिये तो उन्होंने कुछ ऐसा समय भी देखा होगा कि उनकी कविताओं में ग़रीबी की आवाज़ गूंजती है।

आगाहीय की "योलग़ूज़" शब्दबाली रदीफ़ की ग़ज़ल और मुहम्मस में भी अकेलेपन से संबंध अपने विचारों को प्रकट करता है – इन ग़जलों से शायद यह जाना जा सकता है कि आगाहीय ने बिना शादी अकेलापन में जीवन गुज़ारा था:

इस ज़माने में कोई नहीं जो हाल मेरा पूछे,
दर्द से मेरा दिल है भरा कि यह दर्द है अकेलापन का।
कोई है ही नहीं मरने का जब समय आए,
मुझे अकेला मरा हुआ पाएगा उस दिन जब आए...

मध्यकाल के पद्य में अकेलापन का विषय अक्सर इस मतलब में समझा जा सकता है कि जब कवि के सोच-विचार को समाज में समझनेवाला कोई नहीं मिलता तो कवि अपने आप को अकेला महसूस करता है और कविता का विषय इस तरह के अकेलापन के बारे में हो सकता है।

पता चलता है कि ऐतिहासिक सूत्रों तथा कवि की रचनाओं के आधार पर आगाहीय के बारे में पूरी जानकारी हासिल करना आज के साहित्यकारों का मुख्य काम है।

एक अच्छे रचनाकार के रूप में आगाहीय ने काफी बड़ा रंग-बिरंगे साहित्यिक विरासत छोड़ के गये। शब्द का अद्वितीय स्वामी आगाहीय के पद्य उनके "ताविज़ उल-आशीक़ीन" नामक दीवान में है और वहां पर 447 ग़ज़ल, 3 मुसताज़ाद, 90 मुहम्मस, 5 मुसद्दस, 2 मुराब्बा, 3 मुसम्मन, 4 तारजेबंद, 7 क़ितअ, 80 रुबाई, 10 तुयूक़, 1 मुलाम्मा, 4 चिसतान, 80 मुअम्मा, 4 मसनवी, 1 बाहरी तावील, 1 मुसोवीय उत-ताराफ़ायन, 2 मरसिया, 2 फ़रद, 1 साक़ीयनामा–ई मुरब्बा, 1 अशीक़ और माशूक़ का प्रश्नोत्तर, 19 कसीदे– कुल 18 हज़ार पदवाली कविता है।

उसमें कवि की फ़ारसी में लिखी "अशौरी फ़ारसी" नामक 13 हज़ार पदवाले संग्रह को भी शामिल किया गया है। उसमें 23 ग़ज़ल, 5 मुहम्मस, 1 मुसाम्मन, 1 मुनोजात, 20 इतिहास भी हैं।

आगाहीय ने शास्त्रीय कविता के बीस से ज्यादा पद्धतियों में रचनाएं लिखीं। कवि ने ग़ज़ल, मुसताज़ाद, कसीदे, मुहम्मस, मुसद्दस, मुरब्बा, मुसाम्मन, तारजेबंद, क़ितअ, रुबाई, तुयुक़, मसनवी, मुअम्मा जैसे पद्धतियों में एक से एक अच्छी रचनाएं रचीं। खुद अगहीय ने एक मुसम्मन में अपने कृतित्व की मुख्य पद्धति के बारे में ऐसा लिखा था :

उस चांदनी चहरेवाली का मकान अपना बनाना,
फिराग़ की कविताएं लिखकर अपने हाल पर रोना,
ग़ज़लों में उसके हुसन का बयान करना,
मसनवियों में इशक़ का दर्द सुनाना,
आगहीय जैसे रुबाई को एक ज्ञान बनाना,
विचारों से दिल बहलानेवाले मुहम्मस लिखना,
इन सभी को अपना हमेशा का काम बनाना।
"उस खूबसूरत के घर को अपना घर बनाकर, र्दद भरे कविताएं पढ़कर, अपने इस हाल पर रोकर, इश्क़ के बारे में ग़ज़लों में लिखकर, दिल का दर्द मसनवि में लिखना मेरा हमेशा का काम बन गया, पर मुसम्मन लोखने का जज़म नहीं मिला।".

इससे कवि यह कहना चाहता है कि उसके शायर बनने में उसकी प्रेमिका की हुस्न और मुहब्बत का योगदान बड़ा है।

वास्तव में उनके दीवान को अच्छी तरह देखने और ठीक से पढ़नेवाले को कवि के जमाने की सामाजिक समस्याओं तथा उनके आस-पास के लोगों के हालत को, आगाहीय से गुज़री कठिनाईयों तथा उनके तकदीर को, उनकी महनत और दरबार के

लोगों के साथ काम करने में आयी तरह तरह की समस्याओं, उनके धनी विरासत, साहित्य के क्षेत्र में उनके उस्ताद और समर्थन देनेवाले, शायरी में लब्ज़ का महत्व के बारे बोझ में तथा ज़माने की कठिनाईयों एवं ग़लत लोगों की वजह से उनको पहुंचाए गये दर्द, ग़रीबी और बीमारी में गुज़री ज़िंदगी के आखिरी दिन, मानव और जीवन के बारे में उनके दार्शनिक विचारधाराओं, अशीक़ के दिल से गुज़री कठिनाईयों, दिल की गहराईयों में छिपी सोच-विचार, सपने, कवि के जीवन और व्यतित्व से संबंध सारी बातों के बारे में जानकारी प्राप्त करके, आगाहीय की हालत को पूरी तरह पहचान सकते हैं।

आगाहीय की शायरी का मुख्य विषय है इश्क़। उन्होंने अपने "तावीज़ उल आशीक़ीन" नामक दीवान को इसी लिये ऐसा उनवान दिया था। इसके बारे में अपनी एक ग़ज़ल में लिखते हैं :

आगहीय, आशीक़ लोग तेरी गीतात्मक कविता सुनेंगे,
तो हार जैसा अपने गले में लटका लेंगे। –

मतलब: "हे आगाहीय, यदि प्रेमी आपकी हृदयविदारक कविताएँ सुनते हैं, वे आपकी कविताएं अपने गले में फूलों के हार की तरह लटका लेंगे"।

क्योंकि कवि की ग़ज़ल में एक संवेदनशील प्रेमी के हृदय के स्पंदन, उसकी भावनाओं की ज्वलंत और सुंदर कलात्मक अभिव्यक्ति है।

दीवान में हर ग़ज़ल इश्क का एक चमन है,
आगाहीय इस चमन में एक खूबसूरत हिरन है।

मतलब: "हे आगाहीय, मेरे दीवानों में वर्णित हर ग़ज़ल प्रेम के खिलते चमनज़ार का एक सुंदर गीत है", - लिखता है स्वयं कवि।

हालाँकि आगाहीय ने पारंपरिक विषय और शैली पर कई कविताएँ लिखीं, लेकिन वे उन कवियों में से हैं जिन्होंने कविता को जीवन के काफ़ी करीब लाया। कवि के कृतित्व में जीवन से गहरा संबंध है और हर कविता का विषय जीवन से लिया गया है।

ग़ज़ल और रुबाई को छोड़कर कवि की कृतियों में स्तुति और चालीस से ज्यादा उपदेश के संदर्भ में उपदेशवाली कविताएँ, रहस्यमय भावना में आरिफाना ग़ज़ल, रूबाई और मुहम्मस, विनोदी और शिकायती कविताएं, वसंत और सर्दियों तथा रेगिस्तान का वर्णन करनेवाली कविताएं मिलती हैं। एक और हमवतन कवि अलीब साबिर टर्मिज़ी अपनी कविताओं के परिचयात्मक भागों में एक चित्रकार की तरह प्रकृति का ऐसा सुन्दर वर्णन देता है कि इनको पढ़ने से पता चलता है कि दुनिया में कोई भी कवि प्रकृति की छवि के बारे में उनके बराबर नहीं हो सकता है। आगाहीय के प्रकृति वर्णन में भी हम यही देखते हैं। निषकर्श में यह कहा जा सकता है कि आगहीय उज़्बेक साहित्य में प्रकृति वर्णन में भी सब से श्रेष्ठ हैं।

आगाहीय एक शानदार और विपुल अनुवादक भी हैं जिन्होंने पूर्वी देशों के साहित्य की 19 उत्कृष्ट कृतियों का उज़्बेक में अनुवाद किया है। इन अनुवादों में कायकोवस का "काबुसनामा", सअदी का "गुलिस्तान", निज़ामी का "हफ्त-पायकर" और खुसरो देहलवी का "हश्त बिहिष्ट", अब्दुर्रहमान जामी की "यूसुफ और जुलेहा", "सलमोन और अब्सोल", "बहारिसतान", ज़ैनिद्दीन वासिफी की "बडो' उल-वकोए"', मीरखंड की "रवज़त उस-सफ़ा", हुसैन वाज़ काशिफ़ी द्वारा "अहलाकी मुहसिनी", बद्रीदीन हिलाली द्वारा "शाह और गदा", शराफ़िद्दीन अली याज़दी का "ज़फ़रनामा" जैसे पूर्वी देशों की प्रसिद्ध साहित्यिक और ऐतिहासिक रचनाएँ शामिल हैं। इन कार्यों में से केवल "फसीह अल-कासरी" की टिप्पणी, "दलेल उल-हयारत" का तुर्की से उज़्बेक में अनुवाद किया गया था और बाकी सभी का फ़ारसी से अनुवाद किया गया था।

आगहीय न केवल एक शानदार इतिहासकार हैं, बल्कि ऐतिहासिक कार्यों के कुशल अनुवादक भी हैं। उन्होंने मुनियों के साथ शुरुआत की और मीरखंड के "रवजत उस-सफा" का अनुवाद जारी रखा, जिसे उन्होंने अधूरा छोड़ दिया था। मुनियों ने इस सात-खंडोंवाली रचना को लिखना शुरू किया, दूसरे खंड को पूरा किया, जो अधूरा रह गया था और तीसरे खंड

का भी अनुवाद किया गया। इसके अलावा, मिर्जा महदीखान इबन मुहम्मदनासिर अस्ट्राबाडी का "दुरई नोदिरी" जिसे "नोदिर्नोमा" के नाम से जाना जाता है, जो सज्ज के साथ एक जटिल भाषा और शैली में लिखा गया, इस बेहद सुंदर काम का अनुवाद मूल रूप से मुहम्मदनाज़र द्वारा शुरू किया गया था। जब वह एक उच्च पद पर पहुंचे ख़ीवा के खान मुहम्मद अमिनखान (1846-1855) ने इसे पूरा करने का काम आगाहीय को सौंपा। उसी लेखक के काम "ऐतिहासिक विश्वदृष्टि दुर्लभ" का अनुवाद में भी आगाहीय को जिम्मेदार किया गया है।[6] उन्होंने "रवज़त उस-सफ़ोई नोसिरी", "ज़फ़रनामा", "तारिही मुक़िमखानी", "तबाकोटी अकबरशाही" का भी अनुवाद किया।

एक महान इतिहासकार के रूप में, आगाहीय ने 1813 से 1873 तक खोरेज़म के साठ साल के इतिहास के बारे में लिखा। इतिहास में उनका योगदान फ़िरदाव्स उल-इकबाल के पूरा होने से शुरू होता है, जिसे उनके चाचा मुनिस ने शुरू किया था और उनकी असामयिक मृत्यु के कारण अधूरा रह गया था। अपने काम में मुनिस ने प्राचीन काल से 1813 तक की घटनाओं को शामिल किया - मुहम्मद रहीम प्रथम के शासनकाल के 7वें वर्ष तक की घटनाओं का वर्णन किया था। जब अल्लाकुलीखान गद्दी पर बैठा तो उसने आगाहीय को "फिरदाव्स उल-इकबाल" को जारी रखने का निर्देश दिया। उसके बाद 1813 से उन्होंने खोरेज़म का इतिहास लिखना शुरू किया।

यह ज्ञात है कि मुनीस शुरु करके खत्म नहीं कर पाये प्रसिद्ध इतिहासकार मीरखंड के 7-खंडोंवाले "रवज़त उस-सफ़ो फ़ि सियरात उल-अनबियो वा-एल-मुलुक वा-एल-खुलाफो" ("पैग़मबीरों, राजाओं और खलीफाओं की जीवनी के बारे में पवित्रता का बगीचा") का अनुवाद भी आगाहीय ने जारी रखा था। मुनीस ने अपना पहला खंड समाप्त कर लिया था और अब दूसरे खंड का अनुवाद शुरु किया था।

फिर आगाहीय ने स्वयं पाँच स्वतंत्र ऐतिहासिक कृतियाँ भी लिखीं।

रियाज़ उद-दावला (राज्य उद्यान) 1844 में पूरा हुआ और वह 1824 से 1842 तक की खारेज़म की घटनाओं के इतिहास पर समर्पित है। इस एतिहासिक रचना में अल्लाकुलीखान के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक की घटनाओं का वर्णन है।

"ज़ुबदत उट-टावोरिक्स" (इतिहास की क्रीम) 1845-1846 में लिखी गई थी। इसमें 1843-1846 में खोरेज़म के इतिहास को शामिल किया गया है।

"आगाहीय ने इस कार्य को दो भागों में विभाजित किया है। पहले भाग में वह रहीमकुलीखान के जन्म से लेकर सिंहासन पर चढ़ने तक की घटनाओं के बारे में लिखा है। दूसरे भाग में, वह रहीमकुलीखान के सिंहासन पर बैठने से उनकी मृत्यु तक की घटनाओं के बारे में लिखा है"[7].

उनकी तीसरी ऐतिहासिक कृति "मस्जिद की सल्तनत" जिसमें 1846 से 1855 तक की अवधि की घटनाएं शामिल हैं।

"गुलशनी सरकार" ("राज्य का चमन") 1856-1865 में खारेज़म में हुई घटनाओं का विवरण है।

---

[6] Тошев Н. Огаҳийга нисбат берилувчи таржималар: “Тарихи жаҳонгушойи Нодирий” \\ “Ўзбек тили ва адабиёти”, 2009, 6-сон, 30–32-бетлар.(ताशेव न। आगहीय को दिया जानेवाला अनुवाद का श्रेय: "तारिही जहांगुशाई नादिरी" \\ "उज़्बेक भाषा और साहित्य", अंक 6, पृष्ठ 30-32).

[7] Мунировв К. Хоразмда тарихнавислик (XVII–XIX ва XX аср бошлари). – тошкент: Ғ.Ғулом номидаги Адабиёт ва санъат нашриёти, 2002, 49-бет. (मुनीरोव क़. खोरेज़म में इतिहासलेखन (XVII-XIX और प्रारंभिक XX शताब्दी)। – ताशकंद, ग.गुलाम नामक साहित्य और कला प्रकाशन। 2002, पृष्ठ 49)

"शाहिद उल-इकबाल" 1865 से 1872 तक की घटनाओं के विवरण से संबंधित है। इस किताब में प्रसिद्ध शासक फ़िरुज़ की अवधि का वर्णन है, ज़ार रूस द्वारा ख़ीवा ख़ान को कब्ज़ा करने के समय की घटनाओं को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है।

सामान्य तौर पर ये कार्य "उज़्बेक, तुर्कमेन, काराकल्पाक और कज़ाख लोगों के सामाजिक-आर्थिक जीवन को दर्शाते हैं, जो खिवा खान के क्षेत्र में रहते हैं। उस समय के ख़ीवा ख़ान से संबंध बुखारा अमीरात और कोकंद ख़ान, ईरान, भारत और अफ़ग़ानिस्तान के साथ संबंध, आपसी युद्ध, खिवा-रूस के व्यापारिक संबंध, 20 वीं सदी के 40-50 के दशक से ख़िवा ख़ान क स्थिति तथा रूस के साथ संबंधों में राजनीतिक लक्ष्यों की प्राथमिकता, साथ ही लोगों की संस्कृति, रीति-रिवाज और पारिवारिक जीवन के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी की एक विस्तृत श्रृंखला।"[8].

आगाहीय खारेज़म के इतिहास में सबसे कठिन अवधियों में रहे और उन्होंने कई शासकों को देखा। उनके जीवनकाल के दौरान मुहम्मद रहीमखान प्रथम (1805-1825), अल्लाहकुलीखान (1825-1843), रहीमकुलीखान (1843-1846), मुहम्मद अमिनखान (1846-1855), अब्दुलाखान (5 महीने), कुतलुगमुरादखान (7 खान), सैय्यद मुहम्मदखान (1856) -1865), मुहम्मद रहीमखान द्वितीय (1865-1910) जैसे बादशाहों ने राज्य किया।

इतिहासकार अपने ऐतिहासिक कार्यों में वर्णित घटनाओं को अपनी आंखों से देखा इसलिये वे विशवासनीय हैं। "आगाहीय ने इन ऐतिहासिक घटनाओं को तथ्यात्मक सामग्री के साथ लिखा था। इन तथ्यात्मक सामग्रियों में शामिल ऐतिहासिक घटनाओं के न सिर्फ वर्षों को बल्कि महीनों, दिनों तक तथा उन स्थानों के भौगोलिक पहलुओं का भी बिलकुल सही वर्णन है। इस अर्थ में आगाहीय की ऐतिहासिक रचनाएँ बोबर्नोमा को याद दिलाती हैं और कवि के जीवनकाल में लिखी गई कई ऐतिहासिक रचनाओं से श्रेष्ठ हैं।"[9].

विद्वानों का कहना है कि ऐतिहासिक विज्ञान के विकास में आगाहीय का योगदान भी अमूल्य है।

मुहम्मद्रिज़ो आगाहीय न केवल अलीशेर नवाई की तरह एक कलाकार-कवि हैं बल्कि एक विचारक और अच्छा लेखक भी हैं। कई ग़ज़लें, क़ितअ, रूबाई, मुहम्मस, तारजेबंद और मसनवियों में आगाहीय एक अच्छा दार्शनिक और लेखक नज़र आते हैं।

सिर्फ़ "तवीज़ उल-आशिकिन" में चालीस से अधिक ग़ज़लें हैं, जो आगाहीय की विचारशील कविता की गवाही देती हैं।" "

यद्यपि दुनिया में कई कलाकार, कवि और लेखक हैं, उनमें से बहुत कम को विचारक और लेखक की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया है। आखिरकार, कलम के लोग मुख्य रूप से दिल के लोग होते हैं और उनमें उमार खय्याम, अलीशेर नवाई, मिर्जा बेदिल जैसे रचनाकार अपने कार्यों में विचार और भावनाओं को जोड़ने में कम सक्षम हैं।

विचारक शब्द का अर्थ है कि वह एक ऐसा व्यक्ति है जो व्यापक और गहराई से दार्शनिक रूप से सोचने की क्षमता रखता है। विचारक, सबसे पहले, गहन ज्ञान, व्यापक दृष्टिकोण, महान जीवन अनुभव वाला व्यक्ति है, दूसरी तरफ़ से, जीवन, मनुष्य और

---

[8] А б д у л л е в С. Огаҳий ва Хорамзмда тарихнавислик \\ Огаҳий абадияти (Мақолалар, эсселар). – Тошкент: “Ўзбекистон”, 1999, 144-бет. (अबदुल्लायेव स। आगहीय और खोरमज़म में इतिहासलेखन \\ आगहीय अनंत काल (लेख, निबंध)। - ताशकंद: "उज़्बेकिस्तान" 1999, पृष्ठ 144).

[9] А й ё м и й. Ўт чақнаган сатрлар.– Тошкент: Ғ.Ғулом номидаги Адабиёт ва санъат нашриёти, 1983, 72-бет. (अय्यामीय। आग की रेखाएँ। – ताशकंद, ग.गुलाम नामक साहित्य और कला प्रकाशन। 1983, पृष्ठ 72).

जीवन का अर्थ, अच्छाई और बुराई, प्रेम और घृणा, ईमानदारी और अशुद्धता, नश्वर और शाश्वत, सूक्ष्मता और बुराई, मित्रता और शत्रुता, धर्म और विश्वासघात जैसी प्राचीन और शाश्वत अवधारणाओं के बारे में गहरी समझ और दार्शनिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करने में सक्षम होनी चाहिये। यह हर सौ कलाकारों में एक मिल सकता है।

हम अलीशेर नवाई को एक विचारक और कवि के रूप में सम्मानित करते हैं। इस महान व्यक्ति के बाद विचारक-कवि के रूप में हम मुहम्मद्रिज़ो आगाहीय की ओर इशारा कर सकते हैं। क्योंकि उज़्बेक साहित्य में नवाई के बाद आगाहीय के काम में अल्लाह का रिश्ता-आलम-इंसान, जीवन का सार और मानव जीवन का अर्थ, मानव स्वभाव के गुण और दोष, सभी प्रकार से व्यापक और गहन दार्शनिक अवलोकन हैं, सूक्ष्म और गहन जीवन अवलोकन, प्रवचन कविताएँ जिन्हें कलात्मक रूप से मजबूत ज्ञान और महान अनुभव के आधार पर उच्च कौशल के साथ व्याख्यायित किया जाता है। कवि के कई छंद ज्ञान लोक कहावतों की तरह लगते हैं, क्योंकि वे एक ऐसे ऋषि की स्थिति में पहुंच गए हैं जिन्होंने बहुतों को देखा और जाना है।

आगाहीय के ज्ञान की सामग्री व्यापक है - जीवन का कोई भी विषय ऐसा नहीं है जिसके बारे में उन्होंने अपना दृष्टिकोण व्यक्त नहीं किया हो! इस अर्थ में कवि का कृतित्व ज्ञान के बगीचे के समान है। इस बगीचे में जो प्रवेश करेगा, वह निश्चित रूप से वह फूल पाएगा जिसे वह चाहता है- वह ज्ञान जिसे वह खोजता है।

महान कवि मुहम्मद्रिज़ो आगाहीय के बुद्धिमान शब्द को संकलन करने के लिये उनके "तावीज़ उल-आशीक़ीन" नामक दीवान मे शामिल ग़ज़ल, कितआ, रुबाई, मुस्ताज़ाद, मुहम्मस, मुसद्दस, मुसम्मन, तरजेबंद, कसीदे, मसनवी और एतिहासिक रचनाओं से परचे लिये गये हैं। हम आशा करते हैं कि इस किताब वर्णित आगाहीय की दार्शनिक विचारधीराएं उज़्बेक छात्रों को मंज़ूर होगा।

सहायक सूची

1. А б д у л л е в С. Огаҳий ва Хорамзмда тарихнавислик \\ Огаҳий абадияти (Мақолалар, эсселар). – Тошкент: "Ўзбекистон", 1999. (अबदुल्लायेव स। आगहीय और खोरेज़म में इतिहासलेखन \\ आगहीय का अनंत काल (लेख, निबंध)। - ताशकंद: "उज़्बेकिस्तान" 1999).
2. А й ё м и й. Ўт чақнаган сатрлар. – Тошкент: Ғ.Ғулом номидаги Адабиёт ва санъат нашриёти, 1983. (अय्यामीय। आग की रेखाएँ। – ताशकंद, ग.गुलाम नामक साहित्य और कला प्रकाशन। 1983).
3. М у н и р о в Қ. Хоразмда тарихнавислик (XVII–XIX ва XX аср бошлари). – тошкент: Ғ.Ғулом номидаги Адабиёт ва санъат нашриёти, 2002. (मुनीरोव क़. खोरेज़म में इतिहासलेखन (XVII-XIX और प्रारंभिक XX शताब्दी)। – ताशकंद, ग.गुलाम नामक साहित्य और कला प्रकाशन, 2002).
4. Т о ш е в Н. Огаҳийга нисбат берилувчи таржималар: "Тарихи жаҳонгушойи Нодирий" \\ "Ўзбек тили ва адабиёти", 2009, 6-сон (ताशेव न। आगहीय को दिया जानेवाला अनुवाद का श्रेय: "तारिही जहांगुशाई नादिरी" \\ "उज़्बेक भाषा और साहित्य", अंक 6).
5. Э р г а ш е в Қ. Огаҳий ҳаёти ва фаолиятига доир \\ "Ўзбек тили ва адабиёти", 2019, 5-сон. (एरगाशेव क़। आगहीय के जीवन और कार्य के बारे में \\ "उज़्बेक भाषा और साहित्य"। 2019).

ताश्कन्द राजकीय प्राच्य विद्या विश्वविद्यलय,
ताशकंद, उज़्बेकिस्तान

8

अस्मिता के स्वर

डॉ. राखी बालगोपाल

पितृसत्तात्मक समाज के अनुसार ही हमेशा लिंग पहचान की अवधारणा की जाती है। स्त्री और पुरुष- इन्हीं दो लिंगों को हमेशा समाज में स्वीकृति मिली है और उन्हें ही मान्य समझा गया है। लेकिन इन पुराने मानदंडों को तोड़ने का समय अधिक हो गया है। पुरुष, स्त्री या किसी भी व्यक्ति को अपनी लिंग पहचान स्वयं करनी है। जन्म लेते समय व्यक्ति का जो लिंग होता है, अगर उसी के अनुसार व्यक्ति अपना पहचान बनाता है तो उसे Cisgender कहते हैं। लेकिन जब व्यक्ति अपनी लिंग पहचान जन्म से विपरीत अवस्था में समझता या पहचानता है तो उसे Transgender कहते हैं। यहाँ Transgender शब्द एक Umbrella Term है जिसके अन्दर सभी एल जी बी टी आई क्यू समुदाय आते हैं। 2014 में सुप्रीम कोर्ट ने ट्रान्सजेन्डर समुदायों को पहली बार 'तीसरे जेन्डर' के तौर पर पहचान दी। 'तीसरे जेन्डर' की संज्ञा से प्रश्न उभरता है- पहला और दूसरा जेन्डर किनको दें? स्त्री पुरुष क्या ऐसा मानने को तैयार होंगे? बिलकुल नहीं, स्त्री पुरुष की समानता पर ज़ोर देकर, पहला, दूसरा स्थान का सवाल ही नहीं उठना है। तो फिर 'तीसरे जेन्डर' की स्वीकृति क्यों? जेन्डर में भिन्नता है, लेकिन उसे दर्जों का स्थान नहीं समानता का स्थान देना है। अतः तीसरे जेन्डर से अच्छा ट्रान्सजेन्डर शब्द ही मान्य है। ट्रान्सजेन्डर समुदाय के लोग भी ऐसा ही मानते हैं।

ट्रान्सजेन्डर लोगों के पहचान की संघर्ष गाथा स्टोनवॉल दंगें (1969) से प्रारंभ मानी जाती है। इस दंगें में ट्रान्सजेन्डर समुदाय के लोग और पुलिस वाले भी मारे गये। न्यूयोर्क के ग्रीनविच गाँव में स्थित सटोनवॉल इन्न वास्तव में एल. जी. बी.टी आन्दोलन का मक्का कहा जा सकता है। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में बताया गया है कि सभी मनुष्यों को गौरव और अधिकारों के मामले में, जन्मजात स्वतंत्रता और समानता प्राप्त है। लेकिन लिंग समानता में यह घोषणा पूर्ण रूप से कायम नहीं हो पायी है। इसी कारण ट्रान्सजेन्डर समुदाय के लोग आज भी अपने हक की माँग केलिए कई तरह के मार्ग अपना रहे हैं। उनके निरन्तर हस्तक्षेप के कारण ही समाज में, अदालत में, शिक्षा संस्थाओं में, साहित्य में उनके प्रति जो विकृत मनोभाव थी वह मिट रही है। आश्चर्य की बात यह है कि ये समुदाय मनुष्य सभ्यता के प्रारंभ से ही हमारे बीच में थी, लेकिन उनकी आवाज़ बुलन्द होने में इतना लंबा समय लगा।

दुनिया भर में आज ट्रान्सजेन्डर समुदाय अपनी पहचान लेकर बाहर आ रहें हैं और भारतीय समाज में भी वे अपनी जगह बनाने के प्रयास में हैं। अब साहित्य की दुनिया उन्हें पूर्ण रूप से अपना रही है जिसकी वजह से उनकी समस्याएँ एवं संघर्ष कलमबद्ध होकर जनसाधारण तक पहुँच रही है। यह बदलाव हिन्दी साहित्य क्षेत्र ने पूर्ण मन से अपनाया और ट्रान्सजेन्डर समुदाय की गाथा उपन्यास, आत्मकथा, जीवनी, कहानी, कविता के माध्यम से खुलती जा रही है। ध्यान देने की बात यह है कि हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा में ट्रान्सजेन्डर विमर्श पूर्ण रूप से चर्चित नहीं हो रहा है। कविता की दुनिया में इस विमर्श की संवेदना विलम्ब से आयी। हिन्दी में ट्रान्सजेन्डर पर केंद्रित पहला कविता संग्रह है 'अस्तित्व और पहचान'। कविता संग्रह का शीर्षक सार्थक है क्यों कि यह ट्रान्सजेन्डरों के अस्तित्व को बनाये रखने और पहचान को कायम रखने के संघर्ष से जुड़ी है। उनकी लड़ाई स्त्री-पुरुष के समान जीने केलिए है, मनुष्य की तरह सारे कार्यों को निभाने की है। स्त्री पुरुष उनका आदर

नहीं करते क्योंकि उन्होंने ट्रान्सजेन्डरों को जैविक रूप से भिन्न माना। इस गलत धारणा के कारण सदियों से वे सारे मानव अधिकारों से वंचित रहे। जन्म से मृत्यु तक कीड़े की तरह उन्हें कुचलाया जाता है, जिसकी विविध छवियाँ हम इस कविता संग्रह में पा सकते हैं-

न दिन, न रात।
बस दोनों के बीच
प्रकृति की असीम सुंदरता लिए
सबको खूब भाती, खूब मनमोहती...
मैं भी हूँ
कुछ-कुछ साँझ सी
सी या सा ? हाँ
मैं भी हूँ बीच में
स्त्री और पुरुष के
परन्तु प्रकृति की सुंदरता नहीं,
प्रकृति की भूल, एक उपहास
तुम्हारे समाज को चुभता शूल।

(साँझ- पूनम प्रकाश, पृ.16 –अस्तित्व और पहचान कविता संग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

अपने को कहीं स्थिर न रखने पाने की वेदना इन पंक्तियों में प्रकट हैं। समाज का अभिन्न अंग होते हुए भी हमेशा समाज से पृथक रखा गया मानव समुदाय। स्त्री पुरुष की दुनिया ने अपने प्रभुत्व में निर्णय कर लिया कि समाज में केवल दो ही लिंग हैं। इसी कारण उन्हें बताना पड़ता है कि-

मैं तो हूँ तुम सा ही एक.....
देखो न हँसते मेरे चेहरे। रोती आँखे भी तुम सा ही
हृदय स्पंदित होता तुम सा
साँसे और धड़कन एक सी
बस अंतर सा है तो कुछ जैविक संरचना का।

(संवेदना के स्वर - सत्य शर्मा कीर्ति, पृ. 21–अस्तित्व और पहचान कविता संग्रह- विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

अधूरी देह, उससे उत्पन्न मानसिक व्यथा, परिवार की उपेक्षा, समाज की प्रताड़ना, शारीरिक मानसिक शोषण से गुज़रने वाले ट्रान्सजेन्डर समुदाय के दुःख- दर्द का अन्दाज़ा हम नहीं लगा सकते। लेकिन कम से कम उन्हें समझने की कोशिश तो कर सकते है। हमारा भाग्य यह है कि जैविक और मानसिक तौर पर हमारी एक पहचान है, लेकिन सबल मानने वाले हम उनको नहीं पहचान पा रहे हैं तो आखिर कौन पहचानेगा ? उनकी याचना हैं-

मत कर ऐसा बर्ताव
ऐ रहमदिल दुनियावालों
मैं भी एक जीता जागता इंसान हूं,
तुम्हारी तरह....

(मेरे हमदम-संगीता सिंह भावना, पृ. 48- अस्तित्व और पहचान कविता संग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

अगर उन्हें हमसे ऐसी याचना करना पड़ रहा है तो यही साबित होती है कि कमी तो हममें है, ट्रान्स्जेन्डरों में नहीं। वर्तमान समाज में व्यक्ति स्वतंत्रता का प्रामुख्य बढ़ गया है। यह किसी एक जेन्डर केलिए नहीं संभी जेन्डरों की बुनियादी आवश्यकता है। अपनी इच्छानुसार स्वतंत्र जीवन बिताना सभी जेन्डरों का हक है। पर कुछ जेन्डरों केलिए यह निषिद्ध है जिससे असमानता पैदा होती है। मनोबी बन्योपाध्याय अपनी पुस्तक में जेन्डर स्वतंत्रता की बात उठाती है – Beneath my colourful exterior lies a curled up, bruised individual that yearns for freedom – freedom to live life on her own terms and freedom to come across as the person she is. Acceptance is what I seek." (A Gift of Goddess Lakshmi- Manobi Bandyopadhyay, Penguin Books, p.viii, 2017). Acceptance न मिलने के कारण ही ट्रान्स जेन्डर कहीं के नहीं रह पाते हैं-

कहाँ खड़ा है ये
तृतीय लिंगी अवतार
आज के सभ्य समाज की
मुख्यधारा से कटकर
मौन.....
अपराध बोध सा

अपने वजूद को तलाशता

(तृतीय लिंगी अवतार - लव कुमार, पृ.100, –अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह- विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

सभ्यता के प्रारंभ से ही पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री और अन्य जेन्डरों को दबाके रखा। उनकी मूल भूत चिंताएँ समाज के नियम बनें। उनके द्वारा निश्चित हुआ कि अन्य लिंग वालों की भूमिका क्या होनी चाहिए। आदर और सम्मान से साधारण जीवन जीने का विकल्प तक स्त्री और अन्य लिंग वालों को निषिद्ध था। इस बात पर अपने विचार प्रकट करते हुए कमलादास ने अपनी अंग्रेज़ी कविता में ऐसा व्यक्त किया है-

..... Then I wore a shirt and my brother's
trousers, cut my hair short and ignored
My womanliness. Dress in saries, be girl,
Be wife, they said. Be emboiderer, be
cook.
Be a quareller with servants. Fit in Oh,
Belong, cried the categorizers. Don't sit.
On walls or peep in through, our lace
draped windows.
Be any, or be Kamala. Or Better still, be
Madhavikutty. It is time to choose a name,
a role....

(Kamaladas - Summer in Calcutta, p.58, D.C. Books, Thiruvananthapuram, 2017)

यह नारी पर ही नहीं लागू की गयी जबकि सभी अन्य लिंग वालों के लिए भी निश्चित थी। इनमें नारी वर्ग दमते- दमते उठ खड़ी हुई, लेकिन अन्य लिंग वाले तब भी न उठ पाये। आज भी वे उठने की कोशिश में है-

काश !
दी होती
समाज ने मुझे
थोड़ी सी पनाह
दिया होता थोड़ा सा
अपनापन
थोड़ा सम्मान
तो मैंने भी पाया होता
कोई मुकाम।
काश !
मेरे हाथों भी
थमाए होते
शिक्षा और सम्वेदना के
दो अस्त्र
तो जीवन में मेरे भी
आया होता
ज्ञान का प्रकाश।

(काश! मेरे हिस्से भी आया होता मुकाम- लता अग्रवाल, पृ. 118, – अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

समाज की अस्वीकार्यता एवं उनके अलिखित नियमों के कारण ट्रान्सजेन्डर समुदाय को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है जिनमें एक, रोज़गार के समान अवसर का निषेध है। कितने ही ऐसे क्षेत्र हें जहाँ अन्य लोगों की तरह वे समाज और राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान दे सकते हैं। लेकिन इसका अवसर न होने की वजह से ही रोटी के लिए उन्हें अपना शरीर बेचना पड़ता है, ताली बजाकर जीने के लिए विविश किए जाते हैं। उसपर भी तानें सुनने पड़ते हैं। अजीत कुमार सिंह उनकी इस व्यथा को सही मायने में अवतारित करते है-

भूख भी लगती है हमको
यह समझने की ज़रूरत है तुमको
चोट लगती है हमको तो हमारे दर्द को
महसूस करने की ज़रूरत है तुमको
जेंडर में बाँटकर, सरहदें तय कर दी है तुमने
ये तो बताओ कि देह को जब भूख लगती है
तो क्या यह कोई सरहदें मानता है..

(देह- अजीत कुमार सिंह, पृ.108, अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020.)

अपनी पहचान न बना पाना ही मनुष्य की सबसे बड़ी विडम्बना है। बाकी सब इसके बाद ही आता है। अलगाव, एकाकीपन, अस्तित्व का खोखलापन उन्हें निराशाबोध से भर देती हैं। ज़िन्दगी उनके लिए सड़ी, रूखी- सूखी, निष्फल, आनन्दरहित, रंगहीन खेल बन जाती है जहाँ वे अपने को कहीं के नहीं पाते-

न हम तीन में
न तेरह में
ये कैसा बवाल ?
न नर में न नारी में
मचा है धमाल
जिस समाज में जन्में हम
उसी समाज ने पाला
छत्तीस का आँकड़ा हमसे।

(बड़ा सवाल- ड़ॉ. लता अग्रवाल, पृ.123,124, अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

ट्रान्सजेन्डर समुदाय वालों को कभी यह नहीं लगता कि वे असाधारण हैं, वे स्त्री- पुरुष के समान ही अपने को साधारण मानते हैं। लेकिन जब लोग उन्हें असाधारण मानते और बोलते हैं तो उनके प्रति व्यवहार भी असाधारण हो जाती है। अगर ट्रान्स लोगों को साधारण मानने के लिए समाज तैयार हो जाएँ तो उनकी सारी समस्याएँ खत्म हो सकती है । पर समाज का दष्टिकोण सुधारने की अपेक्षा आज ज़्यादा संकीर्ण होती जा रही है और जेन्डर की समस्या बढ़ती जा रही है-

क्या फर्क पड़ता है
वह हीमेल हो या फीमेल
या हो शीमेल
सब हैं इसी माटी की सन्तान
फिर जेंडर का इतना क्यों बखान
उन्हें त्रिशंकु क्यों बना दिया गया
उसके क्रोमोज़ोम को पार्टी में सजा क्यों दिया गया
तीसरी ताली खौफजदा नहीं है
जेनेटिक डिफेक्ट है कोई ओर अदा नहीं है
एक समानान्तर दुनिया है 'तीसरी ताली'
किसी की 'बख्शीस' को मत दो गाली।

(हिजडों की राम कहानी- कर्मानंद आर्य, पृ. 47, –अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

डॉ. शैलेष गुप्त वीर ने अपनी 'क्षणिकाओं' में ट्रान्सजेन्डर समुदाय के दुःख-दर्द को, आशंकाओं को, तिरस्कार को, आक्रोश को कम शब्दों में पूरी बात समाते हुए ऐसा अभिव्यक्त किया हैं-

1. लैंगिक- विकृतियों का
उपहास मत उड़ाओं,
उन्हें मुख्य धारा में लाओ।

2. ढोल पीटते हैं
ताली बजाते हैं
नाचते-गाते हैं
पर मेहनत का खाते हैं।

3. यौनिक- विद्रूपता के
चटखारे मत लो
उन्हें उनके
अधिकार दो।

4. उन्हें भी है
समाज में
समानतापूर्वक
जीने का हक, बेशक !!!

(अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, पृ. 31-32, विजेन्द्र प्रताप सिंह,रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

सदियों से समाज में होते हुए ट्रान्सजेन्डर समुदाय अदृश्य रहें जिसके कारण जब-जब वे प्रकट हुए, उन्हें अदृश्य ही रहने के लिए कई तरह से विवश किये गये। लेकिन समय के बीतते स्वयं की आत्मचेतना के जागृत होने से ट्रान्सलोगों ने कई राज्यों में संगठन बनाए, रैलियाँ निकाली और समाज में खुले आम प्रकट हुए। अपने हक की माँग ने समाज का, साहित्य का ध्यान आकर्षित किया। उनके अनुकूल सरकार ने भी कई नियम लागू किये। पर जो नियम लागू किए गए उसमें भी त्रुटियाँ हैं। यह इसलिए कि ट्रान्स समुदाय

की पूर्ण जानकारी नियम विशेषज्ञ नहीं जानते, अगर ट्रान्स समुदाय के लोगों से मिलकर, उनसे सुझाव ली जाये तो उसमें ज्यादा स्पष्टीकरण हो सकती है । शायद इसी कारण 'देह ' नामक कविता में ऐसा व्यक्त किया गया है-

हसरतें भी कुछ नहीं
वह भी तुम तय करते हो
फिर हमारे जीवन का क्या
हदें हमारी तय करते हो
दम घुटता है हमारा
मुक्त करो हमको साँस तो लेने दो
तभी बचेंगे हम.... ।

(देह- अजीत कुमार सिंह, पृ. 109, अस्तित्व और पहचान कवितासंग्रह, विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अमन प्रकाशन, 2020)

मेडिकल और शिक्षा के सभी क्षेत्रों में जेन्डर अध्ययन एक अनिवार्य विषय के रूप में रखने की ज़रूरत है। मेडिकल क्षेत्र के करिकुलम में ट्रान्सजेन्डर समुदाय से संबंधित अध्ययन का गहरा पठन एवं निरीक्षण की आवश्यकता है क्योंकि हमेशा गलत धारणाओं और वैज्ञानिक परिचय के अभाव से कई ट्रान्स लोगों को मृत्यु गलत चिकित्सा के कारण हुई हैं।

उसी तरह ही ट्रान्सजेन्डर समुदाय के लोगों को अपनी परंपरागत विश्वास एवं धंधे से बाहर आने का समय अधिक हो गया है। समाज जहाँ एक ओर ट्रान्सलोगों से आशीर्वाद की माँग करते हैं, दूसरी ओर उन्हें मुख्य समाज से बहिष्कृत करते हैं। यह दोहरी नीति है। अपनी मानसिक चेतना को सशक्त कर पथभ्रष्ट रास्ते से बचकर शिक्षा द्वारा अपनी मुक्ति का संघर्ष ट्रान्सजेन्डरलोगों को तीव्र करना है। आज समाज एवं राजनीति में ट्रान्सजेन्डर समुदाय से संबंधित चर्चाएँ हो रही हैं, लोगों में धीरे- धीरे बदलाव नज़र आ रही है। इस अवसर का, ट्रान्सजेन्डर समुदाय उचित उपयोग करें और अपने को 'तीसरे जेन्डर' की श्रेणी में नहीं बल्कि समान जेन्डर की मान्यता प्राप्त करने के रास्ते देखें।

ट्रान्सजेन्डर पर केंद्रित कविता संग्रह 'अस्तित्व और पहचान 'उनकी व्यथा एवं संघर्ष का पर्दाफाश करने के साथ उनके प्रति समाज की संवेदना को जगाने का प्रयास करती है। मुख्यधारा समाज की संकुचित सोच के खिलाफ यह संग्रह चुनौती देती है। अस्मिता विमर्श की दिशा में निश्चय ही 'अस्तित्व और पहचान ' काव्य संग्रह ने सराहनीय कदम उठाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सुरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य में किन्नर विमर्श, मनीष प्रकाशन, दिल्ली, 2021.
2. विजेन्द्र प्रताप सिंह, रविकुमार सं, अस्तित्व और पहचान, अमन प्रकाशन, 2020.
3. Mohd. Shamim, Noor Fatima, The Invisible Minority in Literature and Society, Vangmaya Books, Aligarh, 2016.
4. Mandri Bandyopadhyay with Jimli Mukherjee Pandey, Penguin Books, 2017.
5. Kamaladas, Summer in Calcutta, D.C. Books, Thiruvananthapuram, 2017.

असिस्टेंट प्रॉफेसर,
हिन्दी विभाग,
सरकारी महिला महाविद्यालय,तिरुवनन्तपुरम
केरल

9

नरेंद्र कोहली के रामकथा उपन्यासों में समकालीन संदर्भ

प्रेम कुमारी

साहित्यकार जिस समाज में रहता है, वहां की प्रत्येक अच्छी–बुरी परिस्थितियां उनको प्रभावित करती है, उनके मन पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं, और यही कारण है कि पाठकों को उनकी रचनाओं में अक्सर सामाजिक–राजनीतिक जनजीवन के दर्शन होते हैं। युगों से पुराकथाओं, प्रतीकों एवं बिम्बों आदि अनेक माध्यमों की सहायता से समाज की यथार्थ छवि को रचनाओं में उतारने का प्रयास किया जाता रहा है। पुराकथाएं अपने कालजयी चेतना के कारण सहस्त्रों वर्षों से किसी न किसी रूप में अवस्थित रही हैं। उपन्यास हमारे जीवन की बहुरंगी और विविध तसवीर होती है। भारतीय उपन्यास के लिए विषय की कभी कोई कमी नही रही क्योकि, यथार्थ रोज उससे अलग–अलग मोड़ों पर अलग–अलग ढंग से टकराता ही है। डॉ. नरेंद्र कोहली को भारतीय दर्शन और पौराणिक ग्रंथों व मूल्यताओं के प्रति अपार श्रद्धा व आस्था रही है। उनके लेखों में राजनीतिक दर्शन एवं जीवन की समस्याओं की झलक मिलती है। कोहली जी ने रामायण, रामचरितमानस, रामकथा के प्रसंग एवं घटनाओं को वर्तमान संदर्भों से जोड़कर यथा स्थिति से अवगत कराने का एक सफल प्रयास किया है। 'दीक्षा', 'अवसर', 'संघर्ष की ओर' और 'युद्ध' खंडों में विभक्त कोहली जी के अभ्युदय राम कथात्मक उपन्यास की कथा में वर्णित प्रसंग पौराणिक होते हुए भी समकालीन समस्याओं एवं घटनाओं का स्मरण कराते हैं। इस उपन्यास में राम की पौराणिक कथा को आधुनिक बोधगम्यता के साथ वर्णित किया गया है। एक ओर जहां वर्णित अनेक प्रसंग वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, नारी विषयक, समाज सुधार के कार्यों को यथार्थ स्वरूप प्रदान करते हैं, वहीं पर दूसरी ओर उसमें उपस्थित रामकथा के प्रमुख पात्र पाठकों के समक्ष स्वयं को आधुनिक रूप में चित्रित करते हैं। इस प्रस्तुत शोध में नरेंद्र कोहली के रामकथा उपन्यासों को समकालीन संदर्भ में वर्णित करने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द : यथार्थ , संघर्ष, पौराणिक, समसामयिकता, शासन तंत्र, शोषण, अनाचार

साहित्य का संबंध एक ऐसी वस्तु से है, जो हमारे बाहरी इंद्रिय ज्ञान से परे है, जो अनेकों में व्याप्त होती हुई भी एक और अनंत है। प्रेमचंद्र ने हंस में लिखा था "साहित्य उस उद्योग का नाम है जो आदमी ने आपस के भेद मिटाने और उस मौलिक एकता को व्यक्त करने के लिए किया है, जो इस जाहिरी भेद की तह में पृथ्वी के उदर में व्याकुल ज्वाला की भांति छिपा हुआ है। जब हम मिथ्या विचारों और भावनाओं में पड़कर असलियत से दूर जा पड़ते हैं, तो साहित हमें उस सोते तक पहुंचाता है, जहां रियलिटी अपने सच्चे रूप में में प्रवाहित हो रही है।"[1] साहित्य कभी भी पूर्ण स्वतंत्र और समाज निरपेक्ष नहीं होता, वैसे ही साहित्य का इतिहास भी समाज के इतिहास से कटा नहीं होता। साहित्य का अस्तित्व और उसके विकास की गति हमेशा समाज सापेक्ष होती है। साहित्य में परिवर्तन सामाजिक परिवर्तनों से प्रेरित और प्रभावित होते ही हैं। साहित्य का अस्तित्व और विकास समाज सापेक्ष होता है। साहित्य समाज का केवल प्रतिबिंब नहीं होता, वह रचना भी है, इसलिए उसमें नया भी होता है। साहित्य का परिवर्तन और साहित्य के इतिहास का परिवर्तन सामाजिक परिवर्तनों से प्रभावित होते हैं, तो कई बार वे सामाजिक परिवर्तनों को भी प्रभावित करते हैं। साहित्य के समग्र रूप के परिवर्तन और विकास को समाज के इतिहास की सापेक्षता में ही

समझा जा सकता है, लेकिन सावधानी और समझदारी के साथ। उन्होंने लिखा है–"सत्य और असत्य का संघर्ष रामायण और महाभारत काल से लेकर बीसवीं सदी तक बराबर चला आता है, और जब तक एक साहित्य की सृष्टि होती रहेगी, यह संघर्ष साहित्य का मुख्य आधार बना रहेगा।"[2] उपन्यास किसी देश की साहित्यक विचारों की प्रगति को समझने के उत्तम साधन माने गए हैं, क्योंकि जीवन की यथार्थताएँ ही उपन्यास को आगे बढ़ाती है। जन्म से ही उपन्यास यथार्थ जीवन की ओर उन्मुख रहा है।

70 दशक के अंत में नरेंद्र कोहली के अठारह सौ पृष्ठों का राम कथा पर आधारित उपन्यास 'अभ्युदय' उपन्यास ने हिंदी जगत को आंदोलित कर दिया था। कोहली जी के अभियान ने हिंदी साहित्य को भारतीय संस्कृति से परिचित करवाया। भगवान राम की कथा को आधुनिक संदर्भ में दिखाया गया है। रामायण के पात्रों का मानवीकरण किया गया है। यहां राम एवं सीता अवतार नहीं समाज सुधारक हैं, भविष्य दृष्टा है, एवं अन्याय के विरुद्ध लड़ने वाले पात्र हैं। उनके लिए बनवास मात्र वचन पालन हेतु नहीं था, बल्कि मध्य और दक्षिण भारत में एक आंदोलन था, सुधार अभियान था। अभ्युदय में जीवन मूल्यों एवं अमृत सांस्कृतिक परंपरा के दर्शन होते हैं। "नरेंद्र कोहली के साहित्यिक व्यक्तित्व के तीन कोण हैं। मुख्यतः तीन कोण हैं–पूरा कथाओं के शीर्षस्थ चितेरे, सामाजिक संबंधों का एवं सरोकारों के कथाकार तथा विसंगतियों पर निर्मम प्रहार करने वाले व्यंग्यकार।"[3] मानवीय जिजीविषा व्यक्तित्व के अनुरूप हर किसी को जीवन शक्ति प्रदान करती है। मनुष्य समाज को साहित्यकारों के प्रति कृतज्ञ होना चाहिए कि मारक परिस्थितियों के बीच वे जीवन संबल प्राप्त करते हुए मानवीय उदारता का स्तुत्य प्रयास करते हैं।

नरेंद्र कोहली जी सिर्फ सामान्य लेखक एवं व्यंग्यकार न होकर एक अनूठी प्रतिभा के धनी और कल्पना समाहार शक्ति के ऊर्जावान पुंज हैं। वे गम्भीर चिंतक एवं मनीषी विद्वान हैं, उनके मस्तिष्क में केवल बाल्मीकि, वशिष्ठ ही नहीं, बल्कि विश्वमित्र जैसे महान क्रांतिकारी तपोपूत शक्ति स्त्रोत भी विद्यमान हैं, जो राम के हाथों केवल आतंकी ताड़का का वध ही नहीं करते, बल्कि उच्च वर्ग द्वारा शोषित प्रताड़ित एवं पद दलित तपस्विनी अहिल्या का उद्धार भी करवाते हैं। इन दोनों महर्षियों से भी बढ़कर उनके विचार इस लोक में रमें हुए हैं। "त्रेता युग के सर्वश्रेष्ठ ऊर्जावान तापसी क्रांतिकारी संगठन कर्ता समर पटु अपराजेय कुंभज (अगस्त ऋषि) हैं।"[4]

आजाद भारत में एक साथ पनप रहे मानवीय गुण और अमानवीय क्षुद्रताओं; पूंजीवादी क्रूरता एवं जनवादी प्रतिबद्धता को कोहली जी के रचनाओं में आसानी से देख सकते हैं। कोहली जी की आरंभिक रचनाएं उनकी निजी परिवेश एवं व्यक्तिगत अनुभवों के दस्तावेज हैं, जबकि बाद की रचनाएं व्यक्तिगत जीवन के साथ–साथ राष्ट्रीय जीवन के अनेकों अनेक संगठनों से उद्भूत हुई हैं। व्यक्तिगत जीवन की पीड़ा तथा राष्ट्रीय जीवन की तर्कशून्य विद्रुपपूर्ण स्थितियों ने कोहली को भीतर तक हिला दिया है। स्वयं कोहली जी कहते हैं कि "अति संवेदनशीलता की स्थिति में मैंने अपने समाज और देश में फैले हुए उस आतंक का अनुभव किया जिसके मूल में राजनीतिक सत्ता थी। बात यहीं तक समाप्त नहीं हो गई, मैंने अपनी कल्पनाशीलता में उस समाज का निर्माण किया जो इस सारी व्यवस्था का विरोध करता है और तब यह भी महसूस हुआ कि यदि कभी सत्ता का विरोध हुआ तो उसका दमन कब और कैसे होगा?"[5] कोहली जी के आस पास छोटी मोटी कई ऐसी घटनाएं हुई जिससे कोहली जी को लगा कि ये घटनाएं रामकथा से मिलती है ये कथा किसी और काल की न होकर समकालीन लगती है इसीलिए एक साक्षात्कार के दौरान उन्होंने कही कि "जहां सोने का लंका है। जहां शक्तिशाली विकसित और समृद्ध जातियां हैं; पिछड़ी हुई जातियां हैं, जहां चारो ओर राक्षसी आतंक है, देवता भी डरते हैं। ऐसे में एक राम ही हैं, जिनका मन ना किसी से डरता है, ना घबराता है। एक ऐसे राम, जो कहते हैं :

'रामोस्मि सर्वम सह्य '। एक राम जो यह कहते हैं ;

निशिचर हीन करौं मही, ।
भुज उठाई प्रण कीन ।

वह एक पात्र हैं, जो देवताओं और दानवों दोनों इंद्र और रावण की सम्मिलित शक्ति के सामने निर्भय होकर खड़ा हैं। उन्होंने मुझे आकृष्ट किया और मुझे लगा कि आज भी संसार में वही हो रहा है, जो शताब्दियों पूर्व हो रहा था। जब कोई समर्थ जन कोई महान जन सामान्य से जुड़ता है, तो अवतार की श्रेणी तक चला जाता है।"[6]

'दीक्षा' : 'दीक्षा' उपन्यास युग प्रवर्तक उपन्यास माना जाता है। पौराणिक होते हुए भी यह उपन्यास अपने अंदर आधुनिक युग के सत्य को समेटे वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक यथार्थ को उजागर करता है। वर्तमान समाज में फैली भ्रष्टाचार, अनाचार, शोषण और मूल्य विघटन जैसे सामाजिक बुराइयों के यथार्थ को खींचने के लिए उपन्यासकार कोहली जी ने प्रचलित राम कथा उपन्यास में राजा दशरथ के साम्राज्य में रह रही जनता सामाजिक बुराइयों से घिरी नजर आती है। इस उपन्यास में आधुनिक जीवन से जुड़ी बहुत से विशेषताओं के साथ साथ विविध समस्याओं को भी रेखांकित किया गया है। रामकथा आधारित उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य ही समकालीन जीवन की झलक को पौराणिक एवं ऐतिहासिक परिवेश के माध्यम से प्रस्तुत करना रहा है। इस उपन्यास में कथा के दौरान ऐसे कई प्रमुख प्रसङ्ग को दर्शाया गया है, जो कहीं न कहीं वर्तमान संदर्भ से समानता रखता है। कोहली जी यथार्थ की विविध प्रकृति और उनके जटिल स्वरूप की पहचान तथा समकालीन ढांचे में परिवर्तन के साथ श्रेष्ठतर समाज व्यवस्था की चिंता में नरेंद्र कोहली जी को अतीत का स्मरण हो आता है, उन्हें लगता है कि समस्याओं के स्वरूप में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ है अगर कुछ बदला है, तो केवल परिस्थितियां ही बदली हैं। "अतः अतीत और वर्तमान की समानांतरीय समस्याओं के निदान के लिए आधार और निवारणीय प्रक्रिया के ढंग भी हमें समसामयिकता पूर्ण और प्रासंगिक रूप में ही अपनाने होंगे, तभी आधुनिक आततायी रूपी रावण और कंस का विनाश हो सकेगा; स्वर्ण मृग वेषी कपटी मारीच और निज बंधु–बांधवों के मुख के ग्रास को हड़प कर हजम करने वाले कौरवों से मुक्ति प्राप्त हो सकेगी।"[7]

'दीक्षा' उपन्यास की कथा का मूल स्रोत बांग्लादेश की राजनीतिक स्थिति है। बांग्लादेश के युद्ध ने नरेंद्र कोहली को प्रभावित किया था। 'साहित्य यात्रा' पत्रिका में एक साक्षात्कार के दौरान कोहली जी ने यह स्वीकार किया है कि "सन् 1971 में जब युद्ध हुआ बांग्लादेश का और यह सूचना आई कि बांग्लादेश के बुद्धिजीवियों को सामूहिक रूप से मारने के षड्यंत्र किए गए हैं तो मुझे पुराण याद आए।"[8] कोहली जी द्वारा यह कहने से स्पष्ट होता है कि बांग्लादेश में पाकिस्तानी सेना द्वारा जो अत्याचार और क्रूरता की गई और उसके विरोध में वहां के बुद्धिजीवियों में जिस प्रकार की प्रतिक्रिया हुई इन दोनों ने ही उन्हें इस उपन्यास की रचना के लिए प्रेरित किया। उन्होंने इस घटना को विश्वामित्र के आश्रम में हुए राक्षसों का उत्पाद एवं राक्षसों द्वारा ऋषियों की नृशंस हत्या के संदर्भ को आधुनिक रूप में दर्शा कर वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक यथार्थ को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। उपन्यास में कथा का आरंभ सिद्धाश्रम में हो रहे राक्षसों के उत्पाद एवं अत्याचार से प्रारंभ होता है। आश्रम में हुई घटना को लेकर वर्तमान संदर्भ में सामाजिक, राजनीतिक दायित्वहीनता को उजागर किया है।

ऋषि विश्वामित्र के साथ वन जाने के क्रम में युवा राम स्वयं आत्म विश्लेषण करते दर्शाए गए हैं कि "कहाँ थे राम और कहां आ गए। विश्वामित्र अयोध्या ना आए होते तो राम अपने राजभवन में सुख का जीवन व्यतीत कर रहे होते। सम्राट की विभिन्न रानियों की दासियों का कलह देख कर क्षुब्ध हो रहे होते। विभिन्न माताओं का वैर विरोध देखते।"[9] इसी अवस्था में राम की ऐसी सोच वर्तमान युवा पीढ़ी की सोच को प्रदर्शित करती है। कथा के अनुसार गृह कलह के कारण ही राम अपने घर से दूर जाना

चाहते थे। यदि वर्तमान परिप्रेक्ष्य की बात करें तो देखते हैं, कि आधुनिक समाज की अधिकांश युवा पीढ़ी गृह कलह के कारण अपने घरों से दूर होते जा रहे हैं। शांति और प्रेम के अभाव में इनके मन में विरक्ति की भावना पनप रही है। इस कथा के राम और वर्तमान समाज के युवाओं के बीच पनपती सोच में साम्यता नजर आती है।

'दीक्षा' उपन्यास में राम को ईश्वर अवतार की कल्पना से दूर कर एक साधारण युवक के रूप में वर्णित किया गया है, जो बिलासी राजा के उपेक्षित रानी के पुत्र होने के कारण पिता के उपेक्षा से अत्यंत संवेदनशील हो जाता है। वह साधारण व्यक्ति के मान–सम्मान, न्याय–अन्याय के संघर्ष को समझता है। एक प्रसंग में जब विश्वामित्र कहते हैं कि राजकुमार के जीवन से हटकर एक साधारण मानव के संघर्ष को देखने को कहते हैं, तो राम अपनी संवेदना प्रकट करते हुए उनसे यह कहते दिखते हैं कि "एक उपेक्षित माता के सबकी आंखों में खटकने वाले पुत्र के विषय में यह मान लेना उचित नहीं है, कि वह दुःख से अनभिज्ञ होगा; दूसरों के लिए करुणा से शून्य होगा और न्यायान्याय के संघर्ष से उसका परिचय नहीं होगा।"[10] राम की संवेदना युक्त कथन आधुनिक समाज के कुछ ऐसे परिवार और राज परिवारों के अंदर की उन परिस्थितियों को उजागर करता है, जहां एक से अधिक पत्नियां हो और परिवार में अनचाही पत्नी के बच्चों को पिता और परिवार की उपेक्षा सहनी पड़ती हो। आधुनिक समाज में भी सुव्यवस्थित दिखने वाले राज परिवारों में बच्चे किस मानसिक विकृतियों के बीच पलकर बड़े होते हैं, इस यथार्थ को बड़ी ही सफलता के साथ उजागर किया गया है।

'दीक्षा' कथा में वर्णित किया गया है कि आधा जंबूद्वीप रावण के आतंक की चपेट में आ चुका है लेकिन राजा दशरथ राज महल में गृहक्लेश सुलझाने में ही व्यस्त रहते हैं, इधर पंचवटी में खर–दूषण और सूर्पनखा अपने सैनिक शिविर स्थापित कर रखी है। संपूर्ण आर्यावर्त आपातकाल एवं संकटग्रस्त परिस्थिति में है, ऐसे समय में भी राजा दशरथ जरा भी गंभीर नहीं दिखते हैं।

नरेंद्र कोहली के कॉलेज के समय में उनके कॉलेज मे एक घटना घटी थी। जब दो छात्रों के आपसी विवाद में एक ने दूसरे छात्र को चाकू मार दी थी, जिसके कारण रक्तपात हुआ था, सैकड़ों लोंगों की उपस्थिति में कोई भी उसकी मदद को नही आया। उस वक्त वहां की शासन व्यवस्था इस तरीके की थी कि ना कोई पुलिस आई और न कोई बचाने, रोकने आया। उनके मन मे ये विचार आया कि कैसा शासन तंत्र है ये ? सबकी उपस्थिति में कोई भी किसी को चाकू मार सकता है, देश में सरकार है। शासन कहीं नहीं। कोहली जी स्वयं कहते हैं कि "मुझे महर्षि विश्वामित्र स्मरण हो आएं, वे राजा रहे थे, राजर्षि थे, शास्त्रों के ज्ञाता थे। सैन्य संचालन कर सकते थे, किंतु फिर भी उनके आश्रम में राक्षस अपनी मनमानी कर रहे थे। जब इच्छा होती थी रक्त और मांस का खेल खेल जाते थे इतना आतंक फैला देते थे कि वहां अध्ययन–अध्यापन, यज्ञ–योग, पूजा–उपासना, साधना–तपस्या कुछ भी ना हो सके। उनका आश्रम जिस क्षेत्र में था, वहां के राज्य मलद और पुरुष राक्षसों के उदर में समा चुके थे। एक ओर चक्रवर्ती सिरध्व जनक का राज्य था दूसरी ओर चक्रवर्ती दशरथ का; किंतु वे दोनों ही चतुरंगिनी सेनाओं के स्वामी होकर भी सिद्धाश्रम की रक्षा नहीं कर पा रहे थे। वहां कभी न समाज था, न पुलिस थी, न शासन था, ना राजा था, पूर्ण अराजकता थी। जिसके पास भी शारिरिक बल और दुष्ट बुद्धि हो, वह अपनी मनमानी कर सकता था। ऐसे में ऋषि विश्वामित्र राम की शरण में आए थे ।"[11]

कोहली जी ने कॉलेज में हुए उन घटनाओं का पौराणिक संदर्भ में जोड़कर पाठकों के सामने वही रूप प्रस्तुत किया है। जब अन्याय हो रहा होता है तो कोई किसी की मदद को नहीं आता है। पुलिस और सरकार से जनता निराश होकर हार जाती है। ऐसे में ही समय में हम सभी को एक युगपुरुष श्री राम की आवश्यकता है, जो इन अन्याय को मिटा सकें ,समाप्त कर सकें।

वर्तमान समाज में स्त्रियों के साथ हो रहे शोषण, अत्याचार, अनाचार को भी राम कथा में

पौराणिक पात्रों के माध्यम से दर्शाया गया है। हर स्त्री को सम्मान के साथ जीवन जीने का अधिकार होता है, लेकिन यह अधिकार वर्तमान समाज में उनसे छीन लिया जाता है। बच्चियों, स्त्रियों को उनका अपहरण कर उन्हें वासना का शिकार बनाकर मौत के घाट उतार दिए जाते हैं। यह चित्र हर युग में देखने को मिलता है। कोहली जी के सामने भी ऐसी घटनाएं घटी होंगी जिसका उन्होंने 'दीक्षा' उपन्यास में स्थान दिया है। राजा दशरथ के राज्य की सीमा के भीतर ही स्थित ग्राम में रहने वाले निषाद जाति के परिवार की करुण कथा है, जिसको चित्रित किया गया है। उसमें निषाद जाति के एक परिवार की स्त्रियों पर राक्षसी वृत्ति वाले पुरुषों द्वारा जघन्य अपराध को आजानुबाहु के माध्यम से वर्तमान पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। अजानबाहु विश्वामित्र को बताते हैं कि "अवसर देखकर आर्य युवकों का वही दल ग्राम में घुस आया। अकेला अस्वस्थ गहन क्या करता! उन्होंने उसे पकड़कर एक खम्भे के साथ बांध दिया। उसकी वृद्धा पत्नी, युवा पुत्रवधुओं तथा बाला दुहिता को पकड़कर, गहन के सम्मुख ही नग्न कर दिया। उन्होंने वृद्ध गहन की आंखों के सम्मुख बारी–बारी उन स्त्रियों का शील–भंग किया। फिर उन्होंने जीवित गहन को आग लगा दी; और जीवित जलते हुए गहन की उस चिता में लौह शलाकाएं गर्म कर–करके उन स्त्रियों के गुप्तांगों पर उनकी जाति चिह्नित की..."[12] ऐसा जघन्य अपराध राक्षसी प्रवृत्ति वाले मनुष्य ही करते हैं। और वास्तव में यह स्वातंत्र्योत्तर भारत के यथार्थ का ही प्रतिबिंब है। इससे यह स्पष्ट होता है, कि आज समाज में मानवीय संवेदना खत्म हो चुकी है। मानव की राक्षसी प्रवृत्ति गौरान्वित हो रही है। दुष्टता, हिंसा करने वाले सुखी और संपन्नता से जीवन जी रहे हैं। लेखक ने बिहार के एक गांव में धन तथा सत्ता संपन्न लोगों द्वारा निर्धन केवट कथाओं के साथ बलात्कार करने तथा उसकी रक्षा को आए उनके परिजनों को जीवित जला देने के समाचार को ही उन्होंने इस रामकथा में निषाद गहन के परिवार के शोषण को चित्रित किया है। फिर राम ने साहस पाकर, विश सेनापति बहुलाशव के पुत्र देवप्रिय को पकड़ लाए और सत्ताधारी के अभिलाषी पुत्र को मृत्युदंड देते हुए लक्ष्मण को आदेश दिया कि वह उसका वध कर दें और पुत्र को बचाने के लिए सैनिकों सहित आए हुए विद्रोही सेनापति बहुलाश्व को उन्होंने स्वयं अपने हाथों में मार डाला। राम कहते हैं कि "ये लोग आर्य संस्कृति में पोषित होकर भी राक्षस हो गए, राक्षसों के सहायक हो गए। अपने राजसी अधिकारों का दुरुपयोग करने वाले, निरीह प्रजा को पीड़ित करने वाले, ये लोग आर्य नहीं है चाहे फिर भी ये लोग आर्य सेनानायकों के पुत्र ही क्यों न हों। 'आर्य' किसी जाति, वर्ण, आकार, अथवा पक्ष का नाम नहीं है। वह मानवीय सिद्धान्त, आदर्श और महान् चरित्र का नाम है। जो अमानवीय कृत्य इन्होंने निषाद स्त्री–पुरुषों के साथ किए हैं, उन पापों के प्रतिकार इनके हाथ के लिए, इन राक्षसों के लिए, मैं न्यूनतम दंड प्रस्तावित करता हूं।"[13] राम कथा के अनुसार राम समाज में न्याय बोध को पुनः स्थापित करने के लिए तथा अन्याय के विरुद्ध लड़ने के लिए पीड़ितों में जागृति पैदा करने का एक ठोस कदम उठा रहे थे। समसामयिक परिपेक्ष में इस संदर्भ का अधिक महत्व है, क्योंकि यह भारतीय समाज में व्याप्त अकर्मण्यता और शासन तंत्र में व्याप्त राक्षसी मनोवृति को प्रतिबिंबित करता है, और राजनीति के राक्षसी मुख को भी उद्घाटित करता है। उन्होंने पुराने ग्रंथों के कथानक को लेकर उन्हे आधुनिकता का चोला पहना कर समाज को एक नई दिशा देने का अद्भुत प्रयास किया है, डॉ. नरेंद्र कोहली जी ने अपनी लेखनी से साहित्यिक जगत में एक नई क्रांति पैदा की है।

ऐसे ही एक महत्वपूर्ण प्रसङ्ग अहल्या का है, जो ऋषि गौतम की सुसंस्कारी पत्नी हैं और श्राप के कारण शीलाखंड में परिणत हो चुकी हैं। अहिल्या एक श्रापग्रस्त पीड़ित नारी हैं, जो निरअपराध होने पर भी श्रापग्रस्त होकर अकेले वन में इंद्र के द्वारा किए गए कुकृत्य का फल भोगती है। इंद्र के द्वारा अहिल्या का शीलभंग करना और जाते–जाते यह जानाना कि "पहले

तो स्वयं बुला लिया और अब नाटक कर रही है।"[14] आश्रम वासियों के नज़रों में अहल्या को सन्देह के कठघरे में खड़ा कर देता है। समाज इंद्र जैसे सत्ताधारी पुरूष से जीत नही सकता इसीलिए उसकी बातों पर सहमति जाताना यह सिद्ध करता है की पद और सत्ता के मद में इंसान कुछ भी गलत कार्य करके हमेशा बचा रहता है और स्त्री सही मार्ग पर होते हुए भी अपराधी घोषित कर दी जाती है। अपने पति गौतम के उत्कर्ष के लिए अहिल्या एकांतवास करती है, और पाषान की तरह जड़ हो जाती है। अहिल्या तेजोदीप्त नारी है जो समाज व्यवस्था को उजागर करने के लिए कष्ट और संकट झेल कर भी पति परायण बनी रहती है। ऐशवर्य, संपत्ति, यौवन और संप्रभुता का लांछन इंद्र झेलता है, और अहिल्या सामाजिक अभिशाप की आंच में तपकर कुंदन बन जाती है। कोहली जी यह कहते हैं कि पद, धन और सत्ता की शक्ति ही सर्वोपरि थी। समाज में भी बहुत सी ऐसी स्त्रियां है, जो पुरुषों के अत्याचारों के कारण निरअपराध होने पर भी समाज से बहिष्कृत जीवन जीती हैं। यह उपेक्षित नारियां अपने उद्धार के लिए प्रतीक्षारत है। जड़वत, शीलावत; और जब राम ऐसे ही पाषाण बनी अहिल्या के उद्धार करने पहुंचते हैं, तो समाज उनका विरोध नहीं कर पाता क्योंकि कहीं ना कहीं समाज का एक अंग यही चाहता था लेकिन उन्हें राम जैसे युगपुरुष की प्रतीक्षा है। वही राम जो एक तरफ ताड़का का वध करके समाज में शांति की स्थापना करते हैं और दूसरी तरफ वो अयोध्या के राजकुमार हैं। अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र हैं इसलिए कोई उनका विरोध नहीं कर सकता। स्वयं अहिल्या कहती है "मैं अपनी कृतज्ञता किस रूप में अभिव्यन करूं? तुम लोग नर–श्रेष्ठ हो। युग–पुरुष हो। कदाचित् आज तक मैं तुम लोगों की प्रतीक्षा कर रही थी। मैं ही नहीं, आज संपूर्ण आर्यावर्त्त तुम्हारे–जैसे युगपुरुष की प्रतीक्षा कर रहा है। मैं अकेली जड़ नहीं हो गई थी, संपूर्ण आर्यावर्त्त जड़ हो चुका है। वे सब तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। वीर बंधुओ! तुम उनमें उसी प्रकार प्राण फूंको, जिस प्रकर तुमने मुझमें प्राण फूंके हैं। तुम सम्पूर्ण दलित वर्ग को सम्मान दो, प्रतिष्ठा दो। सामाजिक रूढ़ियों में बंधा यह समाज न्याय–अन्याय, नैतिकता–अनैतिकता आदि के विचार और प्रश्नों के संदर्भ में पूर्णतः जड़–पत्थर हो चुका है। राम! तुम इन सबको प्राण दो।"[15]

के. सी. सिंधु ने रामकथा कालजयी चेतना में लिखा है "राम में अन्याय के विरुद्ध कदम उठाने का साहस था। यह भी स्पष्ट है कि सम्पूर्ण आर्यावर्त सामाजिक कुरीतियों में लिप्त है। उसको राम जैसे वीर की आवश्यकता है। रूढ़ियों के बन्धन से समाज को मुक्त करना ही आवश्यक था। राम वही कर रहे थे। अहल्या मुक्त हुई। समाज उसको स्वीकार करने को तैयार हो गया।"[16] पुरुष प्रधान समाज सदा से ही नारी को शंका की दृष्टि से देखना चाहता है और अवसर मिलने पर उसे प्रताड़ित करने से कभी भी चुकता नहीं है। गौतम जैसे महान ऋषि पत्नी की पवित्रता के संबंध में पूर्णताः विश्वास होने पर भी सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर पीड़ित नारी को स्वीकार करने में असमर्थ पुरुष के रूप में दिखाई पड़ते हैं। ऐसे में राम ने रूढ़ियों को तोड़कर समाज को यह पाठ पढ़ाया है, कि नारी पुरुषों के कुकृत्यों का शिकार होकर तिरस्कृत नहीं हो सकती है। उसे भी दूसरों के ही समान समाज में जीवन जीने का अधिकार है। राम का यह कदम अन्याय के विरुद्ध उनके संघर्ष का ही हिस्सा था।

राजनीतिक परिप्रेक्ष्य पर विचार करते हुए विश्वामित्र यह चाहते हैं, कि जनकपुरी और अयोध्या के परंपरागत वैमनस्य को समाप्त करने के लिए और इस प्रकार राक्षसों से लड़ने के लिए आर्य राजाओं के बीच एकता स्थापित करने के लिए राम और सीता का विवाह आवश्यक है और राम को सीता से विवाह करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। गुरु की कथनानुसार और सामाजिक न्याय की रक्षा के लिए राम सीता से विवाह कर लेते हैं। लेकिन विश्वामित्र को इनकी सामाजिक और राजनीतिक आवश्यकता ज्यादा महत्वपूर्ण थी। 'दीक्षा' के इस खंड में यह चित्रित किया गया है, कि सामाजिक यथार्थ हर समाज

में हर युग में विद्यमान यथार्थ ही है। निरीह जनता पर अमानवीय अत्याचार करने वाला राक्षस केवल त्रेता युग में ही नहीं हर युग में जन्म लेता है।

'अवसर' खंड : राजा दशरथ भय की आशंका से ग्रसित होकर नगर की रक्षा के लिए भरत के नेतृत्व वाली सेना को उतरी सीमांत पर नियुक्त करते हैं, और अपने अंगरक्षक दल के नायक चित्रसेन को अयोध्या की रक्षा का दायित्व सौपते हैं। महाबलाधिकृत इसे भी परंपरा के विरुद्ध और व्यवहारिक बताता है, पर दशरथ मानने को तैयार नहीं थे। मन की इस उथल–पुथल के बीच दशरथ निर्णय लेते हैं, कि अधिकार–भोग करना है, तो विरोधियों को मार्ग से हटाना होगा। "यही राजनीति है। उसमें नीति क्या और अनीति क्या? सिद्धांत क्या और आदर्श क्या? राजनीति के सारे सिद्धांतों आदर्शों तथा नैतिकता का एकमात्र सूत्र है– विरोध उन्मूलन। विरोधी का उन्मूलन भी।..."[17] इस खंड में दशरथ के साम्राज्य पर कैकेई के बढ़ते प्रभाव को देखकर उनके मन में राजनीतिक भय उत्पन्न हो गया था और भरत की अनुपस्थिति में राम का राज्याभिषेक कर स्वयं को सुरक्षित कर लेना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने यह कहा की "और आज से किसी राजकीय बंदी के विषय में अधिकारियों से पूछताछ नहीं की जा सकेगी। साम्राज्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक होने पर किसी भी व्यक्ति को बिना अभियोग बताएं भी बंदी किया जा सकेगा।"[18] इस कथन से राजा की निरंकुशता का बोध होता है। 1975 के आपातकालीन तानाशाही के वीभत्स रूप को दशरथ का यह कथन सत्य साबित करता है, जहां नागरिकों के अधिकारों को समाप्त कर राजनीतिक विरोधियों को बंदी बना लिया गया। 1975 में हुए देश में कुछ हालातों को अवसर खंड में देखा जा सकता है।

'अवसर' खंड में भी नारी के शोषण स्वरूप को दर्शाया गया है, जहां सीता यह सोचती हैं कि "सारे समाज का ढांचा ही कुछ ऐसा है, कि नारी कहीं, शोभा की वस्तु है, कहीं भोग कि, कहीं वह अत्यंत शोषित है, कहीं परजीवी। अमरबेल होकर रह गई है नारी; जो अपने पति के माध्यम से समाज का रस खींचती है। समाज से उसका सीधा कोई संबंध ही नहीं है। उनकी सामाजिक उपयोगिता पूरी तरह शून्य है, और उनकी आवश्यकताएं आसमान को छू रही हैं।"[19] सीता सक्रिय होते हुए भी अभी तक कोई महत्वपूर्ण काम नहीं कर पाई थी, वह भी इन्हीं औरतों के तरह घर परिवार में सम्मिलित थीं। सीता को सामाजिक मापदंडों के अनुरूप संतान न होने के आक्षेप को झेलना पड़ता है। राम के मन में विश्वामित्र के द्वारा कहे गए प्रश्न सामने आ जाता है। "ऐसा क्यों है राम! कि अपना घर फूंकें बिना व्यक्ति परमार्थ की राह पर चल ही नहीं सकता।"[20] राम के इस मानसिक द्वंद के पीछे सामाजिक कल्याण उभर कर आता है, वह किसी संतान के होने पर उसकी व्यस्तता में लीन होकर त्याग के मार्ग से भटकना नही चाहते। राम ने विश्वामित्र को वचन दिया था, कि समाज मे शांति और न्याय की स्थापना करेंगें। कोहली जी ने यह दर्शाने का प्रयास किया कि राक्षसी बल तथा भ्रष्ट राजनीति सत्ता को अगर रोका न गया तो समस्त आर्यवर्त और देव भूमि को ग्रास लेगी "कोई संदेह नहीं कि बड़े यत्न से विकसित की गई प्रगतिशील ,न्याय पूर्ण, मानवीय संस्कृति तथा सामाजिक व्यवस्था को भी प्रतिकूल प्रतिक्रियावादी प्रतिगामी राजशक्ति अत्यंत थोड़े से ही समय में समाप्त कर सकती है, अतः मानव समता के सिद्धांत पर आश्रित न्याय पूर्ण समाज के विकास के लिए पहली शर्त है; राजनीतिक शक्ति को हस्तगत करना।"[21]

इस खंड में राजा दशरथ ने कैकयी नरेश को हराकर आत्मसमर्पण करवाया था और कैकयी का विवाह दशरथ से होना तय हुआ, लेकिन कैकयी हठीली, उग्र, तेजस्विनी, महत्वाकांक्षी तथा असाधारण सुंदरी थी। नरेंद्र कोहली जी ने राम के समक्ष कैकेई से कहलवाया है– "मैं वह धरती हूं राम! जिसकी छाती करुणा से फटती है, तो शीतल जल उमड़ता है, घृणा से फटती है, तो लावा उगलती है, दोनों मिल जाते हैं, तो भूचाल आ जाता है, आज मेरी स्थिति भूडोंल की है राम! आवेश से कैकयी का चेहरा लाल हो

गया–मैं इस घर में अपने अनुराग का अनुसरण करती हुई नहीं आई थी। मैं पराजित राजा की ओर से विजयी सम्राट को संधि के लिए दी गई एक भेंट थी। सम्राट और मेरे वय का भेद आज भी स्पष्ट है। मैं इस पुरुष को पति मान पत्नी की मर्यादा निभाती आई हूं, पर मेरे हृदय से इनके लिए स्नेह का उत्स कभी नहीं फूटा। ये मेरी मांग का सिंदूर तो हो गए अनुराग का सिंदूर कभी नहीं हो पाए। ....मैं इस घर में प्रतिहिंसा की आग में जलती सम्राट से संबंधित प्रत्येक वस्तु से घृणा करती हुई आई थी।"[22] कैकेयी को मानवता की दृष्टि से देखते हैं, तो अपराधी लगती है, पर राजतंत्र में स्त्री के जीवन और स्वप्न से जिस प्रकार खिलवाड़ किया जाता है, उसे देखते हुए उसके खिलाफ कैकेयी जैसी स्त्रियों का विद्रोह अपराध नहीं कहा जा सकता। सुमित्रा और कौशल्या जैसी अस्मिता और अस्तित्वहीन लाखों स्त्रियाँ हो सकती हैं, पर कैकेयी कोई एक ही हो सकती है, जो अपनी अस्मिता और स्वतंत्रता से जीने के लिए विद्रोह कर सकती है, और जब ऐसी नारी के अरमानों को कुचल दिया जाता है,तो वह क्रूर हो जाती है। "प्रतिशोध की भावना मनुष्य को कितना निष्ठुर और विवेकहीन बना देती है, कि जो स्त्री कभी अपने पति की सेवा करना अपना सौभाग्य समझती थी, वही स्त्री रोते–चिल्लाते क्रंदन करते मूर्छित होते पति को देखकर न केवल पाषाणवत् होकर चुपचाप स्थायी बैठी है; वरन उल्टे व्यंग्य बाणों से उसे उन्हें बींध भी देती है।"[23]

हर स्त्री की अपनी मर्यादाएं, भावनाएं, इच्छाएं होती हैं। अगर उन भावनाओं का सम्मान नहीं किया जाता है, तो विवशता या भावुकता में किए गए फैसले खासकर विवाह सम्बंधित निर्णय के दुष्परिणाम हमें आगे चलकर देखने को मिलते ही हैं। कोहली जी तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों को दर्शाते हुए स्पष्ट करने की कोशिश करते हैं कि शत्रुओं के धावों से प्रभावित होकर राजा अपनी कमसिन उम्र की पुत्रियों का विवाह वयोवृद्ध राजाओं से कर देते थे, बिना अपनी पुत्रियों की इच्छा को जाने। कैकेयी और दशरथ का विवाह इसी प्रकार का विवाह था, जिसके दुष्परिणाम बाद में सामने आए।

'संघर्ष की ओर' : 'संघर्ष की ओर' इस खंड में रामकथा की अनेक काल्पनिक प्रसंग एवं पात्रों की सहायता से चित्रकूट प्रसंग से पंचवटी प्रसंग एवं पंचवटी प्रसंग से सीता हरण तक की कथा प्रस्तुत किया गया है। इसके माध्यम से वर्तमान की यथार्थ घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। राक्षस राज रावण का राक्षसी अत्याचार एवं भ्रष्ट आचरण का जो स्वरूप दिखाया गया है, उसकी वह तस्वीर वर्तमान की शासन व्यवस्था में बैठे राजनीतिक सत्ताधारियों के आचरण से मिलती है। इस कथा के अनुसार राक्षस राज रावण के साम्राज्य में कोई भी काम बिना रिश्वत के नहीं होता था। भ्रष्टाचार की जड़े निचले स्तर से राजकीय स्तर तक पहुंच चुकी थी और साधारण जन को भी छोटे–बड़े हर कामों के लिए घूस का सहारा लेना पड़ता था। आज आधुनिक समाज में भी साधारण जनता को किसी भी अधिकारियों तक अपनी बात पहुंचाने के लिए उनके अधीनस्थ कर्मचारियों को ढेर सारी रकम देनी पड़ती है। वर्तमान व्यवस्था की इस कथा को कोहली जी ने मूर्त के माध्यम से परिलक्षित किया है। एक काल्पनिक पात्र को युथपति से मिलने के लिए स्वर्ण मुद्राओं की रिश्वत देनी पड़ती है। मूर्त की इस कथा को वर्णित कर कोहली जी ने वर्तमान शासन व्यवस्था को राक्षस राज की संज्ञा दी है एवं घूसखोरी और भ्रष्टाचार से ही साधारण जनता के काम होते हैं इसका वर्णन किया गया है।

'युद्ध 'उपन्यास : कोहली जी ने भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था को, जो सभी स्तरों पर इस देश में फैली हुई है, उसे समकालीनता का चोला पहना कर अपने अभ्युदय उपन्यास के अंतिम खंड युद्ध के माध्यम से वर्णित किया है। इस खंड में चित्रित शासकों एवं उनके शासन व्यवस्था संबंधित पौराणिक प्रसंगों, पात्रों एवं घटनाओं के माध्यम से आधुनिक राजनीतिक सत्ता में मिलने वाली वृतियों जैसे भ्रष्टाचार, पदलोलुपता, कूटनीति गुंडाराज, राजनीतिक दायित्वहीनता, युद्ध की विभीषिका आदि का वर्णन किया गया

है। किष्किंधा राष्ट्र में पूंजीवादी राष्ट्र लंका का कूटनायक एक मायावी सूरा तथा सुंदरी का प्रयोग कर और अविकसित राष्ट्र किष्किंधा के वानर सम्राट बाली को पूर्ण रूप से राक्षस अर्थात शोषक बना देता है। बाली का मायावी द्वारा जन शिक्षा के विरोध में प्रस्तुत तर्को से सहमत होकर सुग्रीव की शिक्षा व्यवस्था के प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए यह कहना कि "शिक्षा आवश्यक है–इसीलिए भावी प्रशासकों को चुनकर शिक्षा के लिए लंका भेज दिया जाए। किष्किंधा का वानर राज्य शिक्षा संस्थानों का व्यय उठाने तथा बुद्धिजीवियों की स्वतंत्रता की चुनौती स्वीकार करने में असमर्थ है।"[24] बाली के द्वारा कहे गए इस कथन में वर्तमान संदर्भ में अपने देश के राजनीतिज्ञों पर विदेशी प्रभाव और विदेशी प्रेम का सशक्त तथा प्रमाणिक वर्णन किया गया है, जो कि वर्तमान राजनीति के एक और यथार्थ चित्र को उजागर करता है। एक और प्रसंग में बाली की सरकार द्वारा शराब विक्रय के पक्ष में बाली के समक्ष आर्थिक मुद्दों से संबंधित तर्क दिया जाता है कि "वह व्यक्ति व्यापारी है यदि वह किसी चीज का निर्माण करता है, और उसे बेचता है, लोग अपनी इच्छा से उसे खरीदते हैं, और इस सारे व्यापार से कर के रूप में राज्य को पर्याप्त आय होती है तो यह अपराध कैसे हैं।"[25]

यह कथन आधुनिक पूंजीवादी सरकारों की नीतियों को प्रदर्शित करता है। बाली के पुनः आगमन से सत्ता का परिवर्तन होना, विपक्ष का क्रूर दमन होना, सुग्रीव के समर्थकों की हत्या होना, आदि वर्णित प्रसंगों के द्वारा आधुनिक विश्व की अनेक प्रांतों और सत्तापरिवर्तन फलस्वरूप दमन की प्रत्येक राजनीतिक परिस्थितियों को प्रदर्शित किया गया है। रावण लंका की सत्ता का लोभी था उसके और सत्ता के बीच आने वाले हर रुकावट को किसी भी नीति से हटाने के वह पक्षधर था। 'युद्ध' उपन्यास में यह पंक्तियां जिसमें कहा गया है कि "रावण ने कुंभकरण को यदि मदिरा के भांड में परिणत ना कर दिया होता, तो आज राक्षस साम्राज्य में कुंभकर्ण रावण का सबसे बड़ा प्रतिद्वंदी होता। वह न बुद्धि में रावण से कम है, न बल में, न शस्त्रसंचालन में, न युद्ध कौशल में,...किंतु बेचारा आरंभ में ही रावण से मात खा गया। युद्ध और राजनीति के मार्ग पर अग्रसर होने के स्थान पर रावण ने उसे मदिरा के भांडों की ओर अग्रसर कर दिया।"[26] सत्ता की लालसा में रावण द्वारा अपनाई गई यह गलत नीति के माध्यम से नरेंद्र कोहली ने समकालीन राजनेताओं और राजनीतिज्ञों के उस चेहरे को समाज के समक्ष चित्रित किया है, जहां सत्ता पाने के लिए उनके द्वारा अक्सर गलत नीतियां अपनाई जाती है। कोहली जी ने वर्तमान राजनीति के कूटनीति को 'युद्ध' उपन्यास के लंका प्रसङ्ग के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया है। सीता को रावण की कैद से मुक्त कराने में लगे राम के संगठन एवं इस प्रयास में उनके साथ खड़े अनेक मित्रों को देखकर लंकापति रावण घबरा जाता है। राम के संगठन एवं मित्रों में फूट डालने के लिए रावण जिसकी कूटनीति का उपयोग करता है, वह देखने लायक है। जिस वानरों को वह तुच्छ कीड़े–मकोड़े समझता था, आज उन्हीं के पास उसने 'शुक 'नामक दूत को संदेश लेकर भेजा, दूत रावण का संदेश सुनाते हुए कहता है कि "शत्रुता किसी की और युद्ध में प्राण देने कोई और आया है, यदि मैंने राम की पत्नी का अपहरण किया तो, उसमें तुम्हें मुझ जैसे मित्र के विरुद्ध युद्ध करने की क्या आवश्यकता है? इस युद्ध में विजय वानरों की हो या राक्षसों की राज्य मेरा जाएगा या तुम्हारा? सेनाएँ मेरी नष्ट होंगी या तुम्हारी परिजन मेरे मरेंगे या तुम्हारे? इस कंगले राम का कुछ भी दाँव पर नहीं लगा है। इस युद्ध की जय–पराजय से निरपेक्ष वह दोनों स्थितियों में लाभ में ही रहेगा। उस कंगले परदेसी के बहकावे में क्यों आते हो? युद्ध में सिवाय अपने और अपनी जाति के विनाश के सिवा तुम्हें और कुछ हाथ नहीं लगेगा ।"[27] रावण द्वारा भेजे गए इस प्रस्ताव के माध्यम से नरेंद्र कोहली ने वर्तमान संदर्भ में अपने देश की राजनीति में आए षड्यंत्र और कूटनीति रूपी विष को चित्रित करने का सफल प्रयास किया है।

इस वर्तमान राजनीतिक कुचक्र के कारण सभी मनुष्यों का जीवन असहनीय बनते जा रहा है। यातना के दौर से गुजरते हुए आम आदमी की स्थिति दयनीय होती जा रही है। उनके चेहरे पर आशा, उत्साह तथा विश्वास का नामोनिशान दिखाई नहीं देता। हर तरफ नफरत की भावना बढ़ रही है। यह प्रसंग राजनीति के दमनचक्र एवं गुंडाशाही की झलक को चित्रित करता है।

लंका कांड प्रसंग में कोहली जी ने राम रावण के युद्ध को वर्तमान राजनीतिक यथार्थ बोध के साथ वर्णित किया है। युद्ध प्रायः राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के कारण होते हैं। युद्ध का तत्काल प्रभाव सामाजिक जीवन में सबसे अधिक पड़ता है। युद्ध के दौरान सैनिक सीमा पर लड़ते हैं, किंतु आंतरिक भागों में दहशत, भय और महंगाई अपने चरम सीमा तक पहुंच जाती है। युद्ध में हमेशा धन–जन दोनों की हानि होती है। इस खंड में राम–रावण युद्ध प्रसंग का यह दृश्य "पराजय की ओर जा रहे रावण के राज्य में सैन्य संचय के लिए जाने वाली अधिकारियों को लंका के प्रत्येक घर के द्वार पर प्रतिशोध का सामना करना पड़ा था।.... स्थान–स्थान पर धमकियों और बल का प्रयोग करना पड़ा। आज की सेना में अधिकांश सैनिक डरा–धमका कर लाए गए थे....घर–घर में विलाप हो रहा था। कुछ घरों के युवक मारे जा चुके थे। कुछ परिवारों के घायल पड़े हुए थे और कुछ के आज लड़ने जा रहे थे। जो मृत समान ही समझे जा रहे थे। लोग रावण और उसके राज्य को कोस रहे थे।"[28] वर्तमान समय में युद्ध से होने वाली क्षति के दृश्य को चित्रित किया गया है।

युद्ध क्षेत्र में हताहतों और मृतकों की व्यवस्था का वर्णन भी समकालीन युद्ध भूमियों की याद दिलाता है। भारत में भारतीय शहीदों को सम्मान के साथ अंतिम विदाई दी जाती है। लेकिन पाकिस्तान जैसे देशों में मृतकों और हताहतों की कोई व्यवस्था नहीं की जाती है। उनकी लाशें युद्ध भूमि में सड़ती रहती हैं। युद्ध भूमियों में सैनिकों के शवों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है, जो कि समकालीन सत्य को राम–रावण युद्ध प्रसंग के माध्यम से उजागर किया गया है। रावण द्वारा अपमानित करने पर विभीषण का राजनीतिक शरणार्थी के रूप में राम के पास जाकर लंका की मुक्ति के लिए राजनीतिक समझौते करने की प्रसंग को वर्तमान समय में राजनीतिक समझौते को प्रतिबिंब करने का प्रयास कोहली जी ने किया है। वर्तमान समय में सभी स्तरों पर देश में उभरी भ्रष्ट राजनीति की व्यवस्था को आधुनिकता का ताना बाना पहना कर अपने रामकथा उपन्यासों के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया है।

निष्कर्ष : नरेंद्र कोहली ने पौराणिक पात्र और ऐतिहासिक प्रसंग के माध्यम से अपनी रचनाओं का सृजन कर आधुनिक जीवन के यथार्थ को उजागर किया है। 'दीक्षा', 'अवसर', 'संघर्ष की ओर' तथा 'युद्ध' इन चार खंडों में विभाजित 'अभ्युदय' उपन्यास की रचना कर कोहली जी ने अपने देश के वर्तमान यथार्थ स्वरूप से आधुनिक पाठकों का साक्षात्कार करवाया है। इस रामकथा के पात्र और प्रसंग वर्तमान युग और परिवेश के अनुरूप प्रस्तुत किए गए हैं। इस उपन्यास की कथा में वर्णित प्रसंग वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, नारी विषयक, समाज सुधार के कार्य के यथार्थ स्वरूप को चित्रित करता है। फैली हुई भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था की झलक को कोहली जी ने 'अभ्युदय' उपन्यास में चित्रित किया है। विश्वामित्र के सिद्धाश्रम में हो रहे राक्षसों के उत्पाद एवं अत्याचार की घटना संबंधी प्रसंग एवं राजा दशरथ की राजव्यवस्था एवं प्रजा की दुर्दशा प्रसंग जंबू दीप में रावण के बढ़ते आतंक एवं राक्षसी उपनिवेश को रोकने में राजाओं की विफलताओं संबंधी प्रसङ्ग वर्तमान राजनीतिक यथार्थ की झलक प्रस्तुत करती है। 'अवसर' खंड में चित्रित अयोध्या में चल रहे राजनीतिक षड्यंत्र की प्रसंग को सन 1975 की आपातकालीन तानाशाही के भयानक रूप को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। 'संघर्ष की ओर' उपन्यास में राक्षस राज रावण का साम्राज्य भी वर्तमान राजनीतिक सत्ताधारियों के राक्षसी एवं भ्रष्ट आचरण को प्रदर्शित करता है।

भ्रष्टाचार, कूटनीति, युद्ध एवं वर्तमान

राजनीतिक सत्ता में फैले अनैतिकता को 'युद्ध' उपन्यास के माध्यम से वर्णित किया गया है। नरेंद्र कोहली जी ने किष्किंधा के शासक एवं शासन व्यवस्था को वर्तमान युग के राजनीतिक, राजनीतिज्ञों के शिक्षा, शराब संबंधी गलत नीतियों तथा सत्ता परिवर्तन एवं दमन की विविध राजनीतिक परिस्थिति को 'अभ्युदय' उपन्यास के चारों खंडों में समाहित राम कथा के पौराणिक प्रसंग एवं पात्रों के माध्यम से वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक यथार्थ को उजागर किया है।

सन्दर्भ सूची :

1. रामविलास शर्मा : आदर्श और यथार्थ , इग्नोउ 2007, प्रेमचंद्र विवेचन
2. वही, पृष्ठ 14
3. व्यंग्य यात्रा पत्रिका, अक्टूबर –दिसंबर 2009, सम्पादक –प्रेम जनमेजय वर्ष–5 ,अंक–21
4. हिंदी चेतना पत्रिका, डॉ. नरेंद्र कोहली एक अप्रतिम प्रतिभा, महाकवि प्रो हरीश शंकर ओझा, अक्टूबर, 2008, वर्ष–10 अंक–40
5. हिंदी चेतना, साक्षात्कार–डॉ अवनीश अवस्थी, नरेंद्र कोहली विशेषांक, अक्टूबर, 2008, वर्ष 10, अंक–40
6. वही पृष्ठ
7. मनोरमा मिश्र, मिथकीय चेतना : समकालीन संदर्भ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 78
8. ,साहित्य यात्रा, संपादक–डॉ. कलानाथ मिश्र, जनवरी–मार्च, 2015 साक्षात्कार
9. नरेंद्र कोहली, 'अभ्युदय 'भाग–1, 'दीक्षा खंड' डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा•) लि• नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 84
10. वही, पृष्ठ 38
11. हिंदी चेतना पत्रिका, डॉ. नरेंद्र कोहली एक अप्रतिम प्रतिभा, अक्टूबर, 2008, वर्ष 10, अंक 40
12. नरेंद्र कोहली, अभ्युदय भाग–1 'दीक्षा खंड' डायमंड पॉकेट बुक्स(प्रा•) लि• नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 17
13. वही, पृष्ठ 73
14. नरेंद्र कोहली, अभ्युदय भाग–1,'दीक्षा खंड' डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा•) लिमिटेड नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 114
15. वही, पृष्ठ 148–149
16. के०सी० सिंधु, रामकथा : कालजयी चेतना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 35
17. नरेंद्र कोहली, अभ्युदय भाग–1, पृष्ठ 196
18. वही, पृष्ठ 201
19. वही, पृष्ठ 207
20. वही, पृष्ठ 211
21. वही, पृष्ठ 247
22. वही, पृष्ठ 227
23. https:www.rachnakar.org/2018/04/3html?m=1
24. नरेंद्र कोहली, 'अभ्युदय' भाग –2 ,'युद्ध खंड' डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा•) लिमिटेड ,नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ 34
25. वही, पृष्ठ 15
26. वही, पृष्ठ 452
27. वही, पृष्ठ 173
28. नरेंद्र कोहली, अभ्युदय भाग–2,' युद्ध खण्ड' भाग–2, पृष्ठ 576

पी.–एच. डी. शोधार्थी,
हिंदी विभाग,
स्वामी विवेकानंद विश्वविद्यालय, सागर,
मध्य प्रदेश

10

शहीद भगतसिंह के विचारों की प्रासंगिकता

दत्तात्रय आसाराम किटाळे

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में अनेक नेता, राजनेता, चिंतक तथा क्रांतिकारी हुए। इनमें सबसे अलग स्थान शहीद भगतसिंह का रहा है। भगतसिंह को राष्ट्रवादी आंदोलन के सबसे प्रभावशाली क्रांतिकारियों में से एक माना जाता है। इसिलिए उन्हें "शहीद-ए-आज़म" अर्थात शहीद शिरोमणि कहा जाता है। उनका हर एक कार्य देश के लिए समर्पित था। वे अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में सोचते ही नहीं, वे सोचते हैं केवल देश के लिए, समाज के लिए, आम आदमी के लिए। इसी सोच ने उन्हें अमर कर दिया। भगतसिंह का मार्ग क्रांति और बलिदान का रहा। भगतसिंह के चिंतन पर मुख्यतः समाजवादी विचारकों, पाश्चात्य क्रांतिकारियों, समसामयिक विचारकों तथा भारतीय क्रांतिकारियों का प्रभाव पड़ा था। सन् 1917 की रूस की साम्यवादी क्रांति से भगतसिंह काफी प्रभावित थे, साथ ही वे वैज्ञानिक समाजवाद के समर्थक थे। भगतसिंह कार्ल मार्क्स, बाकूनिन, रसेल, अप्टान सिंक्लेयर इन विचारकों का साहित्य पढ़ते थे।

भगतसिंह को जाननेवाले लोगों में से अधिकांश लोग उनको क्रांतिकारी तथा हिंसात्मक धरतीपर काम करनेवाले युवक के रूप में ही जानते हैं। भगतसिंह मूलतः विद्रोही थे, लेकिन इसके विपरीत वे एक अच्छे मनुष्य, परम देशभक्त, विचारक तथा एक नेता तो थे ही, साथ में एक उत्कृष्ट लेखक के रूप में भी उनका योगदान अतुलनीय रहा है। भगतसिंह के साहित्यिक प्रेम का उदाहरण उनकी काल-कोठरी में लिखी जेल-डायरी है। "शिव वर्मा ने भगतसिंह द्वारा जेल में अपने अंतिम व असामान्य दिनों में चार पुस्तकों के लिखे जाने की चर्चा की है। इनमें 1. समाजवाद का आदर्श 2. आत्मकथा 3. मौत के दरवाजे पर 4. स्वाधीनता की लड़ाई में पंजाब का पहला उभार यह उनकी रचना में प्रमुख पुस्तकें हैं। ये पुस्तकें सुरक्षित रूप में जेल से बाहर भेज दी गयी थी, पर वे नष्ट हो गयी। भाग्य से 'स्वाधीनता की लड़ाई में पंजाब का पहला उभार' के कुछ अंश उन्हीं दिनों उर्दू साप्ताहिक 'वंदे मातरम' में क्रमशः छपे थे।"[1] इसके अतिरिक्त भगतसिंह ने कुछ महत्वपूर्ण लेख लिखे जिनमें - अछूत का सवाल, मैं नास्तिक क्यों हूँ?, विद्यार्थी और राजनीति, बम का दर्शन, भाषा तथा लिपि, सांप्रदायिकता आदि का विशेष उल्लेख किया जा सकता है। इसमें अभिव्यक्त उनके विचार हमें आज भी प्रासंगिक नजर आते हैं।

भगतसिंह का मानना था कि युवा वर्ग एक बेहतरीन सोच के साथ राजनीति में आये। अपने 'विद्यार्थी और राजनीति' इस लेख में वे कहते हैं- "विद्यार्थियों से कॉलेज में दाखिल होने से पहले इस आशय की शर्त पर हस्ताक्षर करवाये जाते हैं कि वे पॉलिटिकल कामों में हिस्सा नहीं लेंगे।"[2] उनके इस बात से स्पष्ट होता है कि युवक तथा विद्यार्थी को स्कूल तथा कॉलेज में राजनीति के बारे में पाठ पढ़ाये जाने चाहिए और भविष्य में बड़े नेता बनाने के दृष्टिकोण से हमें बच्चों को पढ़ाना चाहिए। वे ऐसे विद्यार्थियों का निर्माण करना चाहते थे, जो भविष्य में बड़े से बड़ा राजनेता बने। वे ऐसी शिक्षा के पक्षधर थे, जो राजनेता, क्रांतिकारी तथा देशभक्तों का सृजन करें।

वर्तमान समय में हमें भी देशहित में काम करनेवाले नेता, क्रांतिकारी और देशभक्तों की आवश्यकता है। आज हमें गुमराह, पथ से भटके तथा स्वार्थवृत्ति के राजनेता अधिकतर दिखाई देते हैं। इन स्थितियों में बदलाव लाते हुए हमें आज डॉ. अब्दुल कलाम, बाबा आमटे जैसे आदर्श नेताओं का निर्माण करना होगा। इस कारण भगतसिंह स्कूल तथा कॉलेज से ही उत्तम राजनीतिक शिक्षा-दिक्षा की कामना करते हैं।

भगतसिंह 'समझौते' को भी राजनीति में एक हथियार के रूप में पेश करते हैं। वे कहते हैं कि, "हमारे लिए समझौता घुटने टेकना नहीं है, बल्कि एक कदम बढ़ना और कुछ आराम करना है।"[3] भगतसिंह समझौते को कायरता नहीं मानते। जीवन में हमें अनेक बार समझौते को अपनाना पड़ता है, इसका मतलब यह नहीं कि समझोता करना कायरता है। शेर को भी दस कदम की छलांग लगाने के लिए दो कदम पीछे सरकना पड़ता है। असल जिंदगी में हमें भी बहुत से काम समझौते से ही करने पड़ते हैं। आज व्यक्ति, समाज और राजनेता अपनी सुविधानुसार समझोते का उपयोग करते हुए दिखाई देते हैं।

भारत में आज भी धर्म के नाम पर लड़ाई-झगडे, दंगे-फसाद खड़े होते हैं। धर्म और जाति का आवाहन कर चुनाव में मत मांगे जाते हैं। किसी एक धर्म या जाति का होना दूसरे धर्म तथा जाति के लिए आज भी नफरत पैदा करता है। समाज के यह चित्र दर्शाते हैं कि आज भी जाति और धर्म नाम की चीज हम मानवतावादी कहलाने वाले व्यक्तियों के खून में दौड़ रही है, इसे रोकना हमारा नैतिक कर्तव्य है। धर्म और ईश्वर संबंधी भगतसिंह के विचार सही मायने में हमारी आवश्यकता बन गये हैं। भगतसिंह कहते हैं- "आज सर्वत्र धर्मवाद और ईश्वरवाद ने हाहाकार मचा दिया है, इस मानसिक स्थिति से समाज को बाहर निकालने के लिए खुद को परिवर्तनवादी, प्रगतिशील कहलानेवाला इस मानसिक स्थिति से बाहर आया है क्या? इसका आत्मपरीक्षण करना जरूरी है। अपने आपको अंधश्रद्धा निर्मूलन का कार्यकर्ता कहलानेवाला, प्रगतिशील कहलानेवाला नमाज कैसे पढ़ सकता है।"[4] इस बात से स्पष्ट होता है कि आज धर्मनिरपेक्षता, पुरोगामी तथा प्रगतिशील कहनेवाला व्यक्ति नकाब पहनकर समाज के सामने खड़ा है।

आज मोटे तौर पर मीडिया के गलत निर्णय या व्यवहार के कारण सांप्रदायिकता को बढ़ावा मिल रहा है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए भगतसिंह कहते हैं -"अखबारों का असली कर्तव्य शिक्षा देना, लोगों से संकीर्णता निकालना, सांप्रदायिक भावनाएँ हटाना, परस्पर मेल-मिलाप बढ़ाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता बनाना था; लेकिन इन्होंने अपना मुख्य कर्तव्य अज्ञान फैलाना, संकीर्णता का प्रचार करना, सांप्रदायिक बनाना, लड़ाई-झगडे करवाना और भारत की साझी राष्ट्रीयता को नष्ट करना बना लिया है।"[5] उनका यह कथन हमें आज भी प्रासंगिक लगता है।

वर्तमान समय में हमें छूत-अछूत इन शब्दों की दीवारें तोड़नी होंगी। मानवता के धर्म को हमें वैश्विक बनाना होगा। जब तक हम सब मनुष्य धर्मनिरपेक्ष विचारों को नहीं अपनायेंगे तब तक समस्याओं की अंधेरगर्दी अपना काम करती रहेंगी। इसलिए भगतसिंह का मानना है कि, "हम चाहते हैं कि सब लोग एक समान हो, उनमें ऊँच-नीच, छूत-अछूत का कोई विभाजन न रहे, लेकिन सनातन धर्म इस भेदभाव के पक्ष में है।"[6] देश के ही नहीं अपितु विश्व के मानव एकसाथ मिल-बाटकर खायें-सोये यह भगतसिंह चाहते थे। ऊँच-नीच का फाँसला वे नहीं मानते थे। वर्तमान समय में अमीरी नाम की भी एक बड़ी जाति निर्माण हुई है। यह सिर्फ उसी दर्जे के लोगों के साथ उठना-बैठना पसंद करती है, जो उनकी बराबरी के हो। यह पाखंड दूर करना है तो भगतसिंह के विचारों को हमें अपनाना होगा।

भगतसिंह के विचार प्रासंगिक रहने का कारण उनके विचारों का तर्कसंगत होना है। मार्क्सवाद,

समाजवाद तथा लेनिन, स्तालिन, क्रोपोटकिन आदि के विचार उन्होंने ऐसे ही नहीं माने, इसके लिए उन्होंने गहरा चिंतन-मनन किया उसके बाद ही उन विचारों का स्वीकार किया। वे कहते हैं- "हम जनता का ध्यान इतिहास में बार-बार दोहराए गये इस सबक की ओर दिलाना चाहते हैं कि गुलामी और बेबसी से कराहती जनता को कुचलना आसान है, परंतु विचार अमर होते हैं।"[7] उनका कहना स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति की हत्या करना आसान है, लेकिन विचारों को तो कोई खत्म नहीं कर सकता। किसी विचार को मानने से पहले हमें उसका तर्कसंगत अध्ययन अवश्य करना चाहिए।

शहीद भगतसिंह देश में समता, बंधुता और प्रेम का राज चाहते थे। स्वतंत्रता पूर्व काल में भी वैसा नहीं हो सका और आज भी परिस्थितियाँ बंधुभाव और समता के विपरीत ही दिखाई देती है। आज भी शोषक-शोषित परंपरा अपना काम कर रही है। गरीब अधिक से अधिक गरीब होता जा रहा है, तो दूसरी ओर अमीर और अधिक अमीर बनता जा रहा है। गरीबी-अमीरी में यह जो दरार है वह हर क्षण बढ़ती जा रही है। जनता को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए हमें उनमें वर्ग-चेतना निर्माण करने की आवश्यकता है। भगतसिंह का मानना है कि, "गरीब मेहनतकश व किसानों को स्पष्ट समझा देना चाहिए कि तुम्हारे असली दुश्मन पूँजीपति है, इसलिए तुम्हें इनके हथकंडों से बचकर रहना चाहिए और इनके हत्थे चढ़ कुछ न करना चाहिए।"[8] पूँजीपति वर्ग वर्तमान समय में भी गरीब एवं मेहनतकश लोगों को आपस में लड़ाकर अपना उल्लू सीधा कर रहा है। इन गरीबों के दिलों में वर्ग-चेतना की मशाल जलनी चाहिए तब वह उसके प्रकाश में पूंजीपतियों का असली रूप पहचान पायेंगे। उनका कहना है कि विश्व का सबसे बड़ा पाप क्या है? तो वह गरीब होना है। संसार के सभी गरीबों को चाहे वे किसी भी जाति, रंग, धर्म या राष्ट्र के हो अधिकार एक ही है। तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम धर्म, रंग, नस्ल और राष्ट्रीयता व देश के भेदभाव मिटाकर एकजुट हो जाओ। आज हमें स्वतंत्रता मिल गई, लेकिन उसका फायदा आज भी 80 प्रतिशत समाज को नहीं हो रहा है। भगतसिंह कहते हैं कि वह पूर्ण स्वतंत्रता का नाम है जब लोग परस्पर घुल-मिलकर रहेंगे और दिमागी गुलामी से आज़ाद हो जाएँगे। आज हम आज़ाद तो हो गये हैं, परंतु हमें मानसिक तथा बौद्धिक गुलामी के लिए तैयार किया जा रहा है।

भगतसिंह के क्रांतिकारी विचारों का उद्देश्य ही मूलतः सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन था। इस परिवर्तन की हमें आज भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी उस वक्त थी। उनके विचार क्रांति और संघर्ष के साथ धैर्यपूर्ण अवस्था में किस तरह लड़ना चाहिए, इसकी आज भी हमें प्रेरणा देते हैं। वे कहते हैं- क्रांति के लिए बम की आवश्यकता नहीं होती, वह तो विचार पर आधारित होती है। देश के युवा-वर्ग को भगतसिंह के विचारों को जानने की आज सही मायने में आवश्यकता है। बहुत कम युवा वर्ग जानता है कि भगतसिंह एक बड़े चिंतक तथा विचारक थे। उनके विचार प्रगतिशील होने के कारण पूँजीपति और साम्राज्यवादी सत्ता के विरुद्ध हैं । इस कारण उच्च-वर्ग उनके विचारों को सामने लाने से खतरा महसूस करता है। आज के हमारे अनेक प्रश्नों के उत्तर हम भगतसिंह के विचारों में खोज सकते हैं। हमें कुछ व्यावहारिक कार्य करने की आवश्यकता है। इसलिए भगतसिंह कहते हैं- "एक ही व्यावहारिक काम हजारों किताबों और पत्रिकाओं से अधिक प्रचार कर देता है।"[9] उनके इस कथन से स्पष्ट है कि कोई व्यावहारिक कार्य हम करते हैं तो वह किसी किताब तथा पत्रिका से अधिक प्रचार कर जाता है।

भगतसिंह 'वसुधैव कुटुंबकम' के पुरस्कर्ता थे। वे समस्त मनुष्य वर्ग को शांति का संदेश देते हैं। आज हमारे आस-पास ऐसे कई व्यक्ति है, जो मानवतावादी विचारों की मिसाल है। ऐसा होने के बावजूद हम क्यों किसी जाति, धर्म, मनुष्य, समाज, देश को नीचा

दिखाने की कोशिश कर रहे हैं, यह बात अब भी समझ में नहीं आती। हमें कदम से कदम मिलाकर चलना होगा और सबके सुख-शांति की कामना करनी होगी। सबको समानता का अनुगामी बनना होगा, तभी हम वैश्विक शांति की ओर बढ़ सकेंगे। वे कहते हैं कि, "हम मानवीय जीवन को इतना पवित्र मानते हैं कि शब्दों में उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हम किसी को चोट पहुँचाने के बजाय मानव-जाति की सेवा के लिए अपने प्राण देने को तत्पर हैं। "[10]

वर्तमान समय में लोग खून के प्यासे हो गये हैं, अपने स्वार्थ के लिए किसी भी हद को पार करते हैं। इससे बचने के लिए हमें मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाना होगा। कुछ लोग आज भी आतंक फैला रहे हैं, उन्हें अपना कार्य त्यागकर मनुष्य जीवन की पवित्रता को समझते हुए मानव जाति की सेवा करनी चाहिए। हम आज झूठी शांति नहीं चाहते बल्कि सच्चे अर्थों में हमें शांति चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से हम समझ सकते हैं कि केवल भगतसिंह का चरित्र ही नहीं, अपितु हमें उनके सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, मानवतावादी, क्रांतिकारी, धर्मनिरपेक्ष विचारों की आज भी बड़ी मात्रा में आवश्याकता है। भगतसिंह का चरित्र और अमूल्य विचार आज के युवाओं के लिए भी आदर्श एवं प्रेरणादायी सिद्ध हो सकते हैं। इस दृष्टि से भगतसिंह के विचारों का अनन्यसाधारण महत्त्व स्वयंसिद्ध है।

संदर्भ संकेत :

1. सरदार भगतसिंह : पत्र और दस्तावेज, वीरेंद्र सिंधु, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण-2012, पृ. 88
2. भगतसिंह के विचार, पदमा लक्ष्मी, नवप्रभात साहित्य, श्याम भवन, यमुना विहार, दिल्ली, संस्करण-2012, पृ. 54
3. वही, पृ.116
4. शहीद भगतसिंह : जन्मशताब्दी वर्ष विशेषांक, कॉ. प्रा. राम बाहेती, खोकडपुरा, पैठण गेट, औरंगाबाद, पृ. 15
5. भगतसिंह के विचार, पदमा लक्ष्मी, नवप्रभात साहित्य, पृ. 48
6. मृत्युंजय भगतसिंह, राजशेखर व्यास, ग्रंथ अकादमी, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण-2010, पृ. 191
7. अमर शहीद भगतसिंह, विष्णु प्रभाकर, आर्य प्रकाशन मंडल, गांधीनगर, दिल्ली, संस्करण-2012, पृ. 55
8. भगतसिंह के विचार, पदमा लक्ष्मी, नवप्रभात साहित्य, पृ. 48
9. वही, पृ. 28
10. अमर शहीद भगतसिंह, विष्णु प्रभाकर, पृ. 61

शोध-छात्र, हिंदी विभाग,
डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाड़ा विश्वविद्यालय,
औरंगाबाद, महाराष्ट्र

पुस्तक भारती रिसर्च जर्नल

Reg. No. 124726035RC0001
ISSN : 2562-6086
Price : $ 20.00 - Rs. 350

वर्ष 5, जनवरी–जून अंक 1–2

पुस्तक भारती के प्रकाशन

संपादकीय कार्यालय
Toronto, Ontario, Canada, M2R
email : pustak.bharati.canada@gmail.com
Web : pustak-bharati-canad.com

प्रबंध एवं वितरण
Pustak Bharati (Books-India)Publishers & Distributors
H.No. 168, Nehiyan,Varanasi-221202, U. P. India
email: pustak.bharati.india@gmail.com